जुलाई-२०२० ◆ वर्ष ९ ◆ अंक ०३ ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक

जुलाई-२०२०

जीवन की निर्मात्री माँ,
दु:ख-त्राता सुखदाता माँ।
खुद को खोकर हमें संवारे,
ऐसी त्यागमयी है माँ।
ऋषि लिखते-
सत्यार्थ प्रकाश में,
सर्वोत्तम शिक्षक है माँ।।

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० ($\frac{१०५}{}$)

भारत
के व्यंजनों का आधार है, एम.डी.एच. मसालों से प्यार
MDH Garam masala
MDH Kitchen King
MDH Sambhar masala
MDH Sabzi masala
MDH Deggi Mirch
MDH Shahi Paneer masala
MDH Peacock Kasoori Methi
MDH Chunky Chat masala
MDH Pav Bhaji masala
MDH Chana masala
MDH
मसाले
सेहत के रखवाले
असली मसाले सच-सच
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली - 110015 फोन नं० 011-41425106-07-08
E-mails : mdhcare@mdhspices.in, delhi@mdhspices.in www.mdhspices.com
ESTD. 1919

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक – सत्यार्थ सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य (मो.9314535379)

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆	भारत	विदेश
संरक्षक	- 11000 रु.	$ 1000
आजीवन	- 1000 रु.	$ 250
पंचवर्षीय	- 400 रु.	$ 100
वार्षिक	- 100 रु.	$ 25
एक प्रति	- 10 रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच टाऊन हॉल, उदयपुर
खाता संख्या : 310102010041518
IFSC CODE- UBIN 0531014
MICR CODE- 313026001
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३१२१
श्रावण कृष्ण द्वितीया
विक्रम संवत्
२०७७
दयानन्दाब्द
१९६

July - 2020

सत्यार्थ–सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन
3500 रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	2000 रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	1000 रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	750 रु.

०४ वेद सुधा
१९ सत्यार्थप्रकाश और समग्रक्रान्ति
२१ समाचार
२२ क्रोध
२३ अशुभ कर्म एवं शुभ कर्म
२४ पाँच माताएँ
२६ कथा सरित- वास्तविक पुरस्कार
२७ बारिश में स्वस्थ कैसे रहें।
२८ हलचल
३० सत्यार्थ पीयूष

स्वामी श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - ९ | अंक - ०३

मुद्रण द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.)
११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 2417694, 09314535379, 07976271159
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर–313001 से प्रकाशित, सम्पादक–अशोक कुमार आर्य

वेद सुधा

बुराई मत कर
दूसरों की बुराई करनेवाला अपनी बुराई करता है

यश्चकार न शशाक कर्तुं शश्रे पादमंगुरिम्।
चकार भद्रमस्मभ्यमात्मने तपनं तु सः।। - अथर्व० ४/१८/६

यः- जो, अस्मभ्यम्-(उसने) हमारे लिये, चकार- (बुराई) करता है, भद्रं चकार-भला किया, न कर्तुं शशाक- वह न कर सका। तु आत्मने- किन्तु अपने लिये, पादम् अंगुरिम्-अपने पाँव (और) अगुंली का सः- उसने, शश्रे- नाश करता है। तपनम्-सन्ताप, दुःख (लिया) ।

व्याख्या

संसार में कुछ ऐसे प्राणी भी हैं, जिन्हें दूसरों को दुःख देने का व्यसन-सा होता है। उनका प्रयोजन सिद्ध हो या न हो, वे दूसरों को दुःख देंगे, इसमें उनको एक आनन्द आता है। वेद कहता है, जरा सावधान होकर देखो तो आपको अनुभव होगा कि बुराई करने वाला बेचारा बुराई कर नहीं सका। कैसे? दूसरों की बुराई (अनिष्ट) करने से पूर्व बेचारा अपना अनिष्ट कर बैठता है। कर्म करने से पूर्व उसके लिए पहले मन में भाव पैदा होता है। बुरा कर्म करने के लिए मन में बुरा भाव पैदा होगा, अर्थात् बुरा करने से पूर्व बुरा करने वाला अपने मन में बुराई के बीज बो बैठा, अपने मन को बुरा बना बैठा, दूसरे का अनिष्ट तो जब होगा, तब होगा, अपना तो हो गया। मानो अपने हाथों, अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार बैठा। तभी वेद ने कहा है-

शश्रे पादमंगुरिम्।

अपने पैर और अंगुली का नाश करता है।

अथर्ववेद (४/१८/३) में इस भाव को अधिक स्पष्ट रूप से कहा है-

अमा कृत्वा पाप्मानं यस्तेनान्यं जिघांसति।
अश्मानस्तस्यां दग्धायां बहुलाः फट्करिक्रति।।

'कच्ची बुद्धि से पाप करके जो मनुष्य उसके द्वारा दूसरों की हिंसा करना चाहता है, उसकी बुद्धि जलने लगती है और उसमें पत्थर पड़कर फट्-फट् करने लगते हैं।'

जब कोई मनुष्य किसी दूसरे को दुःख देने का इरादा करता है, जब तक उसे दुःख दे नहीं देता, तब तक उसके मन में दुःखदायिनी बैचेनी रहती है और जब दुःख देने में सफल हो जाता है तब उसे भय सताने लगता है। राजदण्ड का भय और सताये गये से बदले का भय उसे आ घेरते हैं। वेद इन भावों का बड़े-बड़े पत्थर नाम देता है। वेद कहता है जैसे अग्नि में पड़कर पत्थर चट्-चट् करने लगते हैं और चटक चटककर पास ठहरे मनुष्य को हानि पहुँचाते हैं। इसी भाँति कच्ची बुद्धि से पाप होता है उसके कारण वह जलने लगती है। पाप की पूर्वावस्था और पाप करने के बाद की अवस्था मानो पत्थर बनकर उस जलती हुई बुद्धि में पड़ते हैं और चटक-चटक कर पास में रहने वाले पापकारी आत्मा को ही दुःख देने लगते हैं। शायद इसी का भाव लेकर लोग कहते हैं- पापी के मारने को पाप महाबली है। इसी कारण वेद में कहा है कि पापी दूसरे की हानि चाहता हुआ भी नहीं कर सकता। वरन्-

चकार भद्रमस्मभ्यम्।

उसने हमारे लिए तो भला ही कर दिया।

मनुष्य को दुःख मिलता है अपने किसी पाप के कारण। जब मुझे कोई दुःख मिले और मैं प्रसन्न मन से उसे सहन कर लूँ और मन में यह भाव धरूँ कि अच्छा हुआ कि कर्म की बही से एक कर्म रेखा तो कटी। उसे मैं समझूँ प्रभु का अनुग्रह। प्रभु मेरे पिता हैं, वह मेरी माता है। माता-पिता सन्तान का अमंगल कभी नहीं चाहते, वे तो सदा सन्तान का हित चाहते हैं। उसने स्नेहमयी जगदम्बा की यह ताड़ना भी मेरे हित के लिए की है। इस तरह विचारने से प्रतीत होता है कि मुझे दुःख देने वाले ने दुःख देकर मेरा भला किया है।

किसी कवि ने कहा है-

जीवन्तु मे शत्रुगणाः सदैव येषां प्रसादात् सुविचक्षणोहम्।

'मेरे शत्रु सदा जीते जागते रहें। जिनकी कृपा से मैं सतर्क व सावधान बना रहता हूँ।'

युधिष्ठिर वन में थे। वहाँ भी दुर्योधन उन्हें दुःख देने का यत्न करता रहता था। किन्तु युधिष्ठिर धैर्य रखते थे वे व्याकुल नहीं होते थे। इससे संसार को युधिष्ठिर की धृति का ज्ञान हुआ। उनके गुणों का प्रकाश हुआ। इस बात को लेकर व्यास मुनि ने युधिष्ठिर को कहा-

प्रकाशितत्वन्मतिशीलसाराः कृतोपकारा इव विद्विषस्ते।

तेरे शत्रु तेरे बड़े उपकारी हैं, क्योंकि उन्होंने संसार में तेरी बुद्धि और चरित्र के बल को प्रकाशित किया है। इस प्रकार धैर्य से विरोधी के विरोध और उसकी बुराई को सहन करने से अन्तःकरण शुद्ध होता है। इससे हमारा भला ही होता है। अतः वेद ठीक कहता है-

चकार भद्रमस्मभ्यम्।

किन्तु

आत्मने तपनम्।

'अपने लिए तो सन्ताप-जलन ही करता है।'

यह दो तरह से होता है। जब दुष्ट देखता है कि मेरे दुर्व्यवहार के कारण अगला विचलित नहीं होता तब वह और जलता है। इस तरह दूसरों का अनिष्ट करने से अपने लिए जलन ही होती है। दूसरा- उस कर्म का फल भोगना पड़ता है। कहा है-

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्मशुभाशुभम्।

'भला- बुरा कर्म अवश्य भोगना पड़ता है। बुरे कर्म का फल अच्छा हो ही नहीं सकता। एक मुसलमान कवि ने कहा है-

अज कमाफाते अमल गाफिल मशौ। गन्दुम अज गन्दुम बिरायद जौ अज जौ।।

कर्मफल से असावधान मत हो। देख, गेहूँ-से-गेहूँ पैदा होता है और जौ से जौ।'

अपने लिए बुरे बीज बोकर पापी अपना भविष्य बिगाड़ लेता है, इसलिए बुरा कर्म (दूसरे का अनिष्ट) दूसरे के लिए तो अनिष्ट नहीं हो पाता, किन्तु उसके लिए- **'आत्मने तपनम्'** हो जाता है।

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष, श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभा आर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा, नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा, श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय; बडोदरा, डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय; कनाडा, नागेन्द्र प्रसाद गुप्ता, बगहा (बिहार), श्री गणेशदत्त गोयल, बुलन्दशहर (उ. प्र.), श्री पूर्णचन्द आर्य, कानोड़, श्री वेदप्रकाश आर्य; नई दिल्ली, श्री सत्यनारायण शर्मा; उदयपुर, श्रीमती राधा देवी-रतनलाल राजोड़ा; निम्बाहेड़ा, श्री सत्यप्रकाश शर्मा; उदयपुर, श्री सुदर्शन कुमार कपूर; पंचकूला, श्री देवराज सिंह; उदयपुर, श्रीमती ललिता मेहरा; उदयपुर

जौहर और सती प्रथा एक तथ्यात्मक विश्लेषण

और खिलजी जीत कर भी हार गया

चित्तौड़गढ़ के किले के बारे में यह अनुश्रुति विख्यात है कि 'सारे गढ़ तो गढ़ैया हैं गढ़ तो एक ही है और वह है चित्तौड़गढ़। इसी किले के बारे में पढ़ रहा था, स्वाभिमान की रक्षा का एक पूरा अध्याय रोमांचित कर रहा था। एक स्थान पर लिखा था – 'इस किले में अगर शौर्य की मिसाल राणा सांगा हैं, साहस की मिसाल पद्मिनी है, बलिदान की मिसाल पन्ना धाय हैं तो भक्ति की मीरा और रविदास भी हैं।' जिसका स्वाभिमान व स्वाधीनता का संकल्प अतुल्य हो उसके बारे में इससे कम क्या लिखा जा सकता है। सत्य ही चित्तौड़गढ़ के वीरों और वीरांगनाओं का इतिहास हमें रोमांचित कर देता है, गर्वोन्नत कर देता है।

जब हम मेवाड़ के इतिहास के झरोखे में प्रवेश करते हैं तो हमारी आँखों के सामने स्वाभिमान और आत्मगौरव की प्रतिमूर्ति राजपूत वीरांगनाओं के अदम्य साहस का इतिहास मानो चित्रित हो जाता है, जिन्होंने मुगल आतताइयों की जीत को भी हार में बदल दिया। आत्मा की अमरता के सन्देश को संभवतः इन्हीं वीरांगनाओं ने आत्मसात कर लिया था तभी तो मृत्यु का भी उत्सव मनाकर क्रूर विधर्मी शासकों की कुत्सित लालसा को ऐसा पाठ पढ़ाया जिसे वे जिन्दगी भर नहीं भूल सके।

चित्तौड़गढ़ का प्रथम जौहर

७०००० औरतों, आदमियों और बच्चों (इनमें शत्रु योद्धाओं की विधवाओं की संख्या ३०००० बतायी जाती है) से भरे हरम ने जिस लम्पट अलाउद्दीन खिलजी की काम-पिपासा को शान्त नहीं किया, वह सौन्दर्य की देवी पद्मावती को हासिल करने की कुत्सित लालसा लिए, खून की नदी में तैरते हुए, अभिलषित सौन्दर्य को दिल्ली ले जाने का स्वप्न लिए, जब चित्तौड़गढ़ में प्रविष्ट हुआ तो विशाल कुण्ड में लपलपाती ज्वालाओं को सामने पा, अपलक देखता रह गया। अकल्पनीय दृश्य को देख भौंचक्का रह गया। मृत्यु को, सांसारिक धन-वैभव को, स्वाभिमान तथा आन-बान के समक्ष तुच्छ समझने वाली रानी ने हँसते-हँसते अग्नि-स्नान कर लिया। खिलजी को महारानी पद्मावती (पद्मिनी) ने एक मुट्ठी राख और सर धुनने का तोहफा दे दिया। अपनी हार पर खिलजी विक्षिप्त हो गया। किले में निर्दोषों का कत्ले आम भी किया परन्तु सोचने की बात यह है कि यूँ तो उसने चित्तौड़गढ़ विजय कर लिया पर क्या सचमुच?

मेरा उत्तर तो नकारात्मक है। विजय आपकी तभी है जब आपकी चाहत पूरी हो, युद्ध का हेतु पूरा हो। राख से भरे कुंड में खिलजी पद्मावती को तलाश रहा था, उसे समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह हँसे या रोये। जिस पद्मावती को पाने हेतु उसने क्या-क्या पापड़ नहीं बेले, जिसकी एक झलक पाने को धूर्त राजनीति का सहारा ले वह चित्तौड़गढ़ में पड़ा रहा था, जिसकी खातिर राणा रतनसिंह (भीम सिंह) को धोखे से गिरफ्तार कर दिल्ली ले जाने पर भी बात बनी नहीं, अपितु राजपूत रण-बांकुरों ने अपनी जान पर खेल, कामुकता में अंधे होने के कारण इनकी चाल को न समझ पाने वाले खिलजी को धता

बता, राणा को मुक्त करा लिया था तथा फिर सारी सेना को लेकर महीनों तक सर पटकने के बाद चित्तौड़-प्रवेश तथा इच्छापूर्ति का वह अवसर आया तो भी सर पीटने के अलावा कुछ भी न मिला। पद्मावती से मिलन का स्वप्न, स्वप्न ही रह गया। एक क्षण को तो उस क्रूर विक्षिप्त आततायी ने यह भी सोचा होगा कि रानी यदि कुँए अथवा तालाब में छलांग लगाती तो कम से कम उसकी मृत देह तो मिल जाती और जिसकी केवल परछाईं ही वह देख पाया था, उसके यौवन को साक्षात् देख ही पाता। पर राजपूत वीरांगनाओं को क्या वह कभी जान सका? जीवित तो क्या कोई कामुक विधर्मी उनके मृत शरीर को भी स्पर्श न कर सके इसीलए तो अग्निस्नान किया गया है। लूट में प्राप्त स्त्रियों के शीलभंग के अभ्यासी यवनों को कोई आखेट न मिल सका और वीरांगनाओं के बलिदान के कारण मुँह की खानी पड़ी। यह वही खिलजी था जिसके बारे में उसके दरबारी इतिहासकार अमीर खुसरो ने लिखा है कि हिन्दुओं को खिलजी के दरबार में झुककर साष्टांग प्रणाम करना आवश्यक था जिसके कारण उनके तिलक के रंग से दरबार का फर्श रंग जाता था, पर यह चित्तौड़गढ़ था। न झुका, न घुटने टेके। वीरों ने शाका किया तो वीरांगनाओं ने जौहर। पद्मावती उसे कभी मिलने वाली नहीं थी तो नहीं ही मिली।

खिलजी का मन अचानक अतीत में चला ही गया होगा। उसे ११ जुलाई १३०१ का दिन अवश्य स्मरण हो आया होगा। रणथम्भौर में भी तो यही हुआ। यह लोमहर्षक उत्सर्ग केवल सिसोदिया वंश तक सीमित नहीं है। हम्मीर तो चौहान थे। चौहानों में भी वीरांगनाओं के यही तेवर थे। खिलजी कभी समझ नहीं पाया कि रणथम्भौर में हम्मीर के नेतृत्व में चौहान वीर जब सर पर कफन बाँध मृत्यु-भय को चुनौती दे रण में उतरे तो मुगल सेनाओं को भागना पड़ा था। तब फिर ऐसा क्या घटित हो गया कि बाजी पलटने का अवसर उसे मिल गया। देखा जाय तो रणथम्भौर तो उसने केवल अपने भाग्य की बदौलत जीता। क्या इसी कारण लोग उसे भाग्यशाली कहते हैं? उसकी बहादुरी पर धब्बा लगाते हैं? पर रणथम्भौर को जीतने में भाग्य ने ही साथ दिया था इस सत्य से वह कैसे इनकार करे। जब युद्ध जीतने के पश्चात् चौहान सेना शत्रु से दिल्ली सल्तनत के झंडे छीनकर अपनी विजय के प्रतीकस्वरूप ले गए, रानी रंगदेवी और उनकी साथी वीरांगनाओं ने दिल्ली सल्तनत के ध्वजों को किले की ओर आते देखा तो चौहानों की हार जान, इससे पूर्व कि मुस्लिम विधर्मी उन्हें हाथ भी लगावें वे अग्निकुंड में कूद पड़ीं। ढलता सूर्य इस बलिदानी जौहर का साक्षी बना। राणा हम्मीर को किले में पहुँचने के बाद अपनी भूल का भान हुआ। कहा जाता है प्रायश्चितस्वरूप उन्होंने अपना सर स्वयं काटकर शिव को भेंट कर दिया। रणथम्भौर ने राजकुमारी देवलदेवी को खिलजी को सौपने की शर्त कभी नहीं स्वीकारी। राजकुमारी ने पद्मजा कुण्ड में कूदकर आत्मोत्सर्ग किया। खिलजी को जब यह पता चला तो उसने लौटकर रणथम्भौर पर कब्जा कर लिया। पर उसकी चाहत के मामले में भाग्य ने भी साथ नहीं दिया। वह सामने के विशाल कुण्ड की अग्नि को विस्फारित नेत्रों से देखता रहा। उसने अपने सगे चाचा, जो कि इससे अपनी औलाद की भाँति प्रेम करता था, के साथ विश्वासघात कर उसका घात कर, खुद को सुल्तान घोषित कर दिया था और दिल्ली में स्थित बलबन के लालमहल में अपना राज्याभिषेक २२ अक्टूबर १२९६ को सम्पन्न करवाया था, आज की घटना ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया कि यह रिक्तता उस क्रूर अपराध की सजा तो नहीं है? खिन्न व बदहवास खिलजी ने क्रूर आक्रान्ताओं की रीति निभाते हुए ३०००० राजपूतों, औरतों, बच्चों को मौत के घाट उतार दिया।

अह्लिलवाड़ के शासक कर्णदेव वाघेला की पत्नी कमलादेवी तथा राजा रामचन्द्र की पुत्री झात्यापली की भाँति राजपूत वीरांगनाओं को अपने जनानखाने में रखने की चाह की जहाँ तक बात है तो वह रणथम्भौर से भी खाली हाथ लौटा था और आज २८ जनवरी १३०३ को इतिहास ने अपने आप को पुनः दोहराया और खिलजी को चित्तौड़गढ़ से खाली हाथ लौटना पड़ा।

कहते हैं समय के साथ सब कुछ बदल जाता है, पर लगता है राजपूत वीरांगनाओं के तेवरों में कोई बदलाव नहीं हुआ। वस्तुतः राजस्थान की इस स्वाभिमानी धरा का इतिहास रोमांच पैदा कर देने वाला है।

कविवर दिनकर ने कहा था-

'जब मैं इस पूज्य धरा पर कदम रखता हूँ तो मेरे पैर एकाएक ही रुक जाते हैं मेरा हृदय सहम जाता है कि कहीं मेरे पैर के नीचे किसी वीर की समाधि या किसी वीरांगना का थान न हो।' धन्य है मेवाड़ की आन-बान और शान।

चित्तौड़गढ़ का द्वितीय जौहर

शरीर पर ८० घाव सहने वाले, फिर भी आन न छोड़ने वाले राणा संग्राम सिंह की अमर गाथा से कौन परिचित नहीं है। रानी कर्मवती, इन्हीं राणा सांगा की पत्नी थीं। वे राणा विक्रमादित्य और राणा उदय सिंह की माँ थीं और महाराणा प्रताप की दादी।

१५३४ में गुजरात के शासक बहादुरशाह ने मेवाड़ पर हमला कर दिया। कायर विक्रमादित्य हाथ पर हाथ धरे बैठा रहा। ऐसे संकट के समय राजमाता कर्मवती ने धैर्य से काम लेते हुए सभी बड़े सरदारों को बुलाया। उन्होंने सिसोदिया कुल के सम्मान की बात कहकर सबको मेवाड़ की रक्षा के लिए तैयार कर लिया। सबको युद्ध के लिए तत्पर देखकर विक्रमादित्य को भी मैदान में उतरना पड़ा। पर उसे युद्ध से भागना पड़ा।

विक्रमादित्य के भागने के बाद चित्तौड़गढ़ में जौहर की तैयारी होने लगी, पर उसकी पत्नी जवाहरबाई जो कि स्वयं युद्धकला में पारंगत थीं तथा जिन्होंने शस्त्रों में निपुण वीरांगनाओं की एक सेना भी तैयार कर रखी थी, उन्होंने जौहर के बजाय युद्ध का निर्णय लिया। वीरांगनाओं ने केसरिया बाना पहना और किले के फाटक खोलकर जवाहरबाई के नेतृत्व में राजपूत योद्धाओं के साथ शत्रुओं पर टूट पड़ीं।

युद्धभूमि में सभी हिन्दू सेनानी खेत रहे। पर मरने से पहले उन्होंने बहादुरशाह की अधिकांश सेना को भी धरती सुंघा दी। यह ८ मार्च, १५३५ का दिन था। मुट्ठी भर योद्धा क्या कर सकते थे? युद्ध का परिणाम तो स्पष्ट ही था। राजपूत वीरांगनाओं के दर्प ने एकबार फिर सूर्य के समान चमक दिखायी। अमरत्व ने मृत्यु की आँखों में निर्भयता से झाँक कर देखा। महारानी कर्मवती के नेतृत्व में १३००० नारियों ने जौहर कर लिया। यह चित्तौड़गढ़ का दूसरा जौहर था।

इतिहास बताता है कि हिन्दू रमणियों को अपनी अंकशायी बनाना इन मुस्लिम आक्रान्ताओं की सनक थी। संभवतः यह उन्हें इस्लाम की सेवा का सर्वाधिक उपयुक्त मार्ग जान पड़ता था। अलाउद्दीन खिलजी इस क्षेत्र में इनका सिरमौर था। हिन्दू-पीड़ा में सुख का अनुभव करने वाले खिलजी के बारे में इतिहासकार 'वुल्जले हेग' ने लिखा है कि- 'अलाउद्दीन खिलजी ने सारे राज्य में हिन्दुओं को निर्धनता तथा पीड़ा के धरातल पर उतार दिया था।'

१२९८ ई. में अलाउद्दीन ने उलूग खाँ एवं नुसरत खाँ को गुजरात विजय के लिए भेजा। अहमदाबाद के निकट कर्णदेव वाघेला और अलाउद्दीन की सेना में संघर्ष हुआ। राजा कर्ण ने पराजित होकर, देवगिरि के शासक रामचन्द्र देव के यहाँ शरण ली। अलाउद्दीन खिलजी ने कर्ण की सम्पत्ति जीती और उसकी पत्नी कलादेवी से स्वयं ने विवाह कर लिया, तब जबकि कर्णदेव अभी जीवित था। कुछ इतिहासकार लिखते हैं कि राजा कर्ण की बेटी देवल के साथ खिलजी ने अपने पुत्र खिज्रखान का विवाह कर दिया। रानी रंगदेवी तथा पद्मावती के जौहर के पश्चात् अलाउद्दीन की कुख्याति जालौर के जौहर का कारण बनी।

अलाउद्दीन के सामने तीसरा जौहर

राजस्थान की वीरप्रसू भूमि के चार प्रसिद्ध जौहरों में से तीन अलाउद्दीन के आक्रमण के समय ही हुए। ऐसा क्यों? क्या यह एक संयोग है? हमें लगता है कि सुलतान की कुख्याति और विकृत यौन मानसिकता की प्रसिद्धि इसके पीछे कारण रही। अह्लिवाड़

के शासक कर्णदेव को परास्त कर उसकी रानी कलादेवी को बलपूर्वक अपनी पत्नी बनाना इसका उदाहरण है। यह निश्चित था कि विजय के पश्चात् रानियों को उसकी क्रूर पिपासा का शिकार होना ही था और राजस्थान की क्षत्राणियों को यह कदापि मंजूर नहीं था।

जालौर का जोहर

कहते हैं कि जालौर के महाराज कुमार वीरमदेव की प्रसिद्धि, वीरता और उनके अनूठे व्यक्तित्व के बारे में सुनकर, अलाउद्दीन खिलजी की पुत्री शहजादी फिरोजा ने वीरमदेव से विवाह करने की जिद पकड़ ली और कहने लगी, 'वर वरूँ वीरमदेव ना तो रहूँगी अकन कुँवारी' अर्थात् निकाह करूँगी तो वीरमदेव से नहीं तो अक्षत कुँवारी रहूँगी।

बेटी की जिद को देखकर अलाउद्दीन खिलजी ने अपनी हार का बदला लेने और राजनैतिक फायदा उठाने की सोचकर अपनी बेटी के लिए जालौर के राजकुमार को परिणय-प्रस्ताव भेजा। कहते हैं कि वीरमदेव ने यह कहकर प्रस्ताव ठुकरा दिया कि...

'मामो लाजे भाटियाँ, कुल लाजे चौहान,
जे मैं परणु तुरकणी, तो पश्चिम उगे भान।'

अर्थात् अगर मैं तुरकणी से शादी करूँ तो मामा (भाटी) कुल और स्वयं का चौहान कुल लज्जित हो जाएँगे और ऐसा तभी हो सकता है जब सूरज पश्चिम से उगे।' अर्थात् यह सम्भव ही नहीं है।

इस जवाब से क्रोधित होकर अलाउद्दीन ने युद्ध का ऐलान कर दिया। एक वर्ष तक तुर्कों की सेना जालौर पर घेरा डालकर बैठी रही फिर युद्ध हुआ और किले की हजारों राजपूतनियों ने जौहर किया। स्वयं वीरमदेव ने २२ वर्ष की अल्पायु में ही युद्ध में वीरगति पाई।

अलाउद्दीन की पाशविकता के बारे में प्रसिद्ध इतिहासकार पी.एन. ओक ने लिखा है- 'मुस्लिम इतिहास के हजार वर्षीय काले युग में जन्मा और पला प्रत्येक मुस्लिम शासक बलात्कार, अत्याचार, कपट और दुष्टता का साक्षात् अवतार था। सभी एक दूसरे से बढ़कर शैतान थे। अलाउद्दीन खिलजी अपनी भयंकर दुष्टता में साक्षात् भयंकर पशु ही था।

जौहर अर्थात् विधर्मी अय्याश शासकों से अपने सतीत्व की रक्षा

अगर हम गंभीर विचार करें तो इन वीरांगनाओं के आत्मोत्सर्ग में 'सतीत्व की रक्षा' का प्रश्न केन्द्र में रहा है। यही कारण है कि जब हिन्दू राजाओं के मध्य युद्ध होते थे, जिनकी संख्या कम नहीं थी तब कोई जौहर कभी नहीं हुआ (अपवाद को छोड़कर- जैसे अह्निलवाड़ के शासक करणसिंह वाघेला ने जब अपने प्रधान मंत्री माधव की पत्नी रूपसुन्दरी का अपहरण कर लिया तो अपने सतीत्व की रक्षा के लिए उसने अपनी जान दे दी)। परन्तु शत्रुपक्ष की खास व आम सन्नारियों का शीलभंग विधर्मी आक्रान्ताओं का नियम था।

सती-प्रथा

इन वीरगाथाओं को प्रस्तुत करने के पश्चात् एक पक्ष पर और विचार कर लेते हैं। कुछ लेखकगण जौहर को सती प्रथा से जोड़ देते हैं जो या तो उनकी भ्रामक सोच है, या नितान्त कुचक्र तथा षड्यंत्र है। जौहर और सती प्रथा एक-दूसरे से तनिक भी मेल नहीं खाते। सतीप्रथा अत्यन्त गर्हित और नारी जीवन पर अभिशाप थी। जातिगत श्रेष्ठता, बहु विवाह, नारी सम्मान की पूर्णतः अवहेलना इस क्रूर प्रथा के कारक क्यों थे इसे हम संक्षेप में यहाँ उल्लेख करने का प्रयत्न करेंगे। जो लोग इसकी प्राचीनता में विश्वास रखते हैं वे अनभिज्ञ ही हैं। वे लोग कैलाशपति शिव की पत्नी सती के आत्मोत्सर्ग से इस प्रथा की शुरुआत मानते हैं परन्तु यह भ्रम मात्र है, क्योंकि देवी सती ने जब अपना शरीर त्यागा था तब शिव तो जीवित ही थे, जबकि सती-प्रथा के अन्तर्गत पति की मृत्यु के पश्चात् उसकी चिता के साथ पत्नी का अग्निस्नान सती-प्रथा का अनिवार्य अंग है। वस्तुतः हुआ क्या था? यहाँ पिता दक्ष के यहाँ एक उत्सव-कार्यक्रम में सती बिना बुलाये भी, बिना शिव जी को साथ लिए पीहर चली आयीं। वहाँ पिता ने शिव का कटु वचनों से घोर अपमान किया जिसे सती सह न सकीं और उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया। (किंवदन्ती

यह भी है कि सती प्रज्ज्वलित यज्ञकुण्ड में कूद गयीं। इस पूरी घटना में कहीं सती प्रथा के तत्वों के दर्शन नहीं होते। यहाँ यह भी ध्यान में रखने योग्य कि न ही यहाँ सती के शीलभंग की कोई आशंका थी न सतीत्व रक्षा का कोई प्रसंग।

दूसरी घटना महाभारत में माद्री की आती है। पाण्डु को स्वास्थ्य कारणों से विषय-प्रसंग पूर्णतः वर्जित था। इस निर्देश का पालन न करने पर, ब्रह्मचर्य-भंग उन्हें मृत्यु के मुख में धकेल सकता था। परन्तु दुर्बल क्षणों में महाराज पाण्डु और माद्री इस निर्देश को भुला बैठे, नतीजा पाण्डु महाराज का शरीरपात हो गया। माद्री पाण्डु की मौत के लिए स्वयं को जिम्मेदार समझतीं थीं अतः प्रायश्चित स्वरूप सबके मना करने, समझाने बुझाने के बाद भी उन्होंने पति के साथ चितारोहण कर मृत्यु का वरण कर लिया। महर्षि दयानन्द ने पूणे प्रवचनों में इस घटना की चर्चा करते हुए इसे एक प्रकार से सतीप्रथा की प्रथम घटना माना है।

सती प्रथा के कारक तत्त्व

कुछ इतिहासकारों के अनुसार गुप्तकाल में ५१० ईसवीं के दौरान सती प्रथा का पहला अभिलेखीय साक्ष्य देखा गया। इस अभिलेख में महाराज भानुगुप्त का वर्णन किया गया है जिनके साथ युद्ध में गोपराज भी मौजूद थे। गोपराज युद्ध के दौरान वीरगति को प्राप्त हुए और उनकी पत्नी ने पति वियोग में सती होकर अपने प्राण त्याग दिए। इसी लेख के सहारे भारत में सती प्रथा जैसी कुरीति को आगे बढ़ाया गया और फिर धीरे-धीरे इस प्रथा ने पूरे भारत में पैर पसार लिए। यहाँ यह दृष्टव्य है कि

प्रायः किसी काल्पनिक स्वर्ग प्राप्ति की बजाय 'स्वार्थ' और 'पुरुष-प्रधान समाज का दंभ' इस गर्हित प्रथा का कारक था। एक वक्त ऐसा भी आ गया जब लोग मृतक् की जमीन पर कब्जा करने के लिए उनकी विधवाओं को जबरदस्ती जलती चिता में झोंक देते थे।

यहाँ हम यह निवेदन करना चाहते हैं बंगाल में विशेष रूप से तथा राजपूताने में आंशिक रूप से सती-प्रथा का विशेष विस्तार हुआ। बंगाल के मध्यकालीन इतिहास को देखने से स्पष्ट होता है कि 'जात्याभिमान' और 'कुलीन की श्रेष्ठता की धारणा' पागलपन की हद को छू चुकी थी। हर कोई अपनी पुत्री को कुलीन पुरुष से विवाहित देखना चाहता था, इसका दुष्परिणाम यहाँ तक हुआ कि एक-एक कुलीन वृद्ध के साथ बीसियों अबलायें ब्याह दी जातीं थीं। परिणाम तो वही होना था, वृद्ध पतिदेव के निधन के पश्चात् पीछे रहीं दसियों पत्नियों का क्या हो? विधवा-विवाह तो घोर कुम्भीपाक नरक का टिकट काट देता, जीते रहने पर समाज के स्वयंभू ठेकेदारों को उनके पथ-भ्रष्ट होने का भय था अतः धर्म का नाम देकर क्रूर हत्या को प्रथा बना दिया गया। शायद ही अपवादस्वरूप कोई पत्नी स्वेच्छा से चितारोहण करती होगी प्रायः सभी स्थितियों में निरीह बालिकाओं को जिन्दा जला दिया जाता था और उनकी चीखों को दबाने के लिए ढोल-मजीरे बजाये जाते थे। बंगाल में यह कुप्रथा इतनी फैल गयी कि राजा राम मोहन राय के भाई के निधन पर उनकी भाभी को भी जला दिया गया। राममोहन राय ने इस कुप्रथा को मिटाने के भागीरथ प्रयास किये तब कहीं जाकर तत्कालीन ब्रिटिश भारत के गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बेंटिक द्वारा ४ दिसंबर, १८२९ को 'बंगाल सती रेग्युलेशन एक्ट' पास किया गया था। इस कानून के माध्यम से पूरे ब्रिटिश भारत में सती प्रथा पर रोक लगा दी गई। रेग्युलेशन में सती प्रथा को इंसानी प्रकृति की भावनाओं के विरुद्ध बताया। इसके बाद सती की घटनाएँ कम होती गयीं, ऐसा लगता है। आधिकारिक रिपोर्ट के मुताबिक, १९४३ से १९८७ तक भारत में सती के ३० मामले सामने आए (यद्यपि ऐसी घटनाओं से इनकार नहीं किया जा सकता जो अज्ञात रह गयीं हों)। आर्यसमाज ने भी इस दिशा में प्रयास किया। बाद में सती के महिमा मंडन को भी अपराध मान लिया गया।

सती-प्रथा एवं जौहर

अति संक्षेप में यहाँ सती प्रथा के उद्‌भव और विकास पर दृष्टि डालते हुए हम बलपूर्वक कहना चाहेंगे कि जिन लेखकों ने जौहर को सती प्रथा के रूप में देखने का प्रयास किया है वह या तो भूलवश या षड्यंत्र पूर्वक किया है क्योंकि पत्नी की मृत्यु के अतिरिक्त सती-प्रथा में जौहर के और जौहर में सती प्रथा के किसी तत्व की विद्यमानता नहीं है।

१. शील भंग की आशंका तथा सतीत्व की रक्षा जौहर का आवश्यक अंग व केन्द्रीय तत्व रहा है। जबकि सती प्रथा में इसका पूर्णतः अभाव ही है।

२. युद्ध का परिवेश और युद्ध में स्वपक्ष की निश्चित हार, जौहर का कारक था। 'सती प्रथा' का युद्ध व युद्ध में हार से, कोई सम्बन्ध नहीं है।

३. जौहर का निश्चित सम्बन्ध 'शाका' से है। युद्ध में जब अपनी हार सुनिश्चित हो जाती थी तो राजपूत वीर 'शाका' करते थे तथा स्त्रियाँ जौहर। 'शाका' का निश्चय हो जाने पर वीर, केसरिया पगड़ी धारण करते थे और एक-दूसरे को पान भेंट कर गले लग कर एक प्रकार से अंतिम विदा ले लेते थे और तब मोह-माया के समस्त बंधन समाप्त हो जाने के कारण और मृत्यु-भय पर विजय प्राप्त करने के कारण साक्षात् यम का रूप धारण कर शत्रु सेना पर टूट पड़ते थे। सती प्रथा में ऐसा कुछ नहीं है।

४. कुछ लोगों का मानना है कि जौहर के समय, पुरुष महिलाओं को जलाकर फिर स्वयं शत्रु के समक्ष आत्म-हत्या करने आते थे एक-एक, दो-दो की संख्या में। जब वो मर जाते थे तब दूसरे आते थे। यह अलाउद्दीन के दरबारी अमीर खुसरो के मुँह से भले ही ठीक दीखता हो परन्तु कोई भारतीय ऐसा सोचे तो विडम्बना ही है। वीरों के वीरगति प्राप्त करने के पश्चात् ही वीरांगनाएँ जौहर करती थीं। रणथम्भौर का जौहर याद कर लें। चौहान वीर जब लौट रहे थे तो उनके हाथ में मुस्लिम झंडे देखकर गलती से शत्रु-विजय समझकर वीरांगनाओं ने जौहर किया था। दूसरे ऐसी सोच कदापि उचित नहीं है कि पत्नियों के मर जाने से निराश और हताश वीर मरने के लिए ही आते थे। जी नहीं, वे शत्रु का काल बनकर आते थे। किसी भी दायित्व वा मोह का अभाव युद्धरत वीर को असीम साहस देता है न कि कायरता। यहाँ रगों में खून का संचार करने वाली एक अद्‌भुत घटना का स्मरण अति संक्षेप में कराना इस धारणा के निराकरणस्वरूप उचित होगा। सलूम्बर (उदयपुर) के राव रतनसिंह के विवाह को अभी सात दिन ही हुए थे कि उन्हें राणा का आदेश हुआ कि औरंगजेब को रोकने हेतु प्रस्थान करना है। राव तुरन्त कूच तो कर गए परन्तु मन पत्नी में रमा था। मन लगाकर युद्ध नहीं कर पा रहे थे। सेवक को गढ़ भेजा कि रानी की कोई निशानी ले आओ। हांडी रानी सब समझ गयीं। प्रेम-पाश में आबद्ध वीर स्व-कर्तव्य का पालन नहीं कर पा रहा। रानी ने पत्र लिखा कि 'प्रिय! अपनी अंतिम निशानी भेज रही हूँ। वीरों के कर्तव्य का पालन करो, अब स्वर्ग में आपके दर्शन करूँगी।' यह लिखकर सैनिक की तलवार लेकर एक ही वार में अपनी गर्दन धड़ से अलग कर दी। सैनिक, थाल में रानी का सर लेकर युद्धभूमि में राव के निकट पहुँचा। राव दंग रह गए-हाय रानी! तूने यह क्या क्या किया? क्षण भर रुका। कुछ समय पूर्व तक असमंजस की मनःस्थिति में युद्ध करने वाला यह वीर साक्षात् प्रलय का अवतार बन गया और जब तक धड़ पर सर रहा, औरंगजेब की सेना को एक इंच नहीं बढ़ने दिया। हांडी रानी का आत्मोत्सर्ग भारत की संस्कृति का मुकुट बन गया। क्या कोई इसे आत्महत्या कहने का साहस करेगा?

५. जौहर का सम्बन्ध पति की मृत्यु से नहीं वरन् अपने शील को, अपने सतीत्व को शत्रुओं से बचाने से प्रमुख था। महाराणा संग्राम सिंह की मृत्यु खानवा के युद्ध के पश्चात् हो गयी थी। रानी कर्मवती ने तब आत्मोत्सर्ग नहीं किया था, पर जब गुजरात के बहादुर शाह के आक्रमण के समय में पराजय सुनिश्चित हो गयी तब अपने सतीत्व की रक्षा के लिए उनके साथ अन्य वीरांगनाओं ने भी जौहर किया। भारतीय आन-बान की शान ये वीरांगनाएँ, क्रूर विधर्मी आतताइयों को अपने

मृतशरीर को भी स्पर्श करने का अवसर प्रदान करना नहीं चाहतीं थीं इस कारण वे अग्निस्नान करतीं थीं।
कहा यह भी जा सकता है कि वीर महिलायें बजाय मृत्यु का वरण करने के अगर शत्रु पर टूट पड़तीं तो शत्रु को अधिक नुकसान पहुँचा सकती थीं। यद्यपि ऐसे में उनके कैद होने की संभावना ही ज्यादा थी फिर भी जौहर का निर्णय उन पर थोपा नहीं जाता था। जिस दूसरे जौहर का उल्लेख हमने ऊपर किया है उसमें राणा विक्रमादित्य की पत्नी जवाहरबाई युद्धकला में पारंगत थीं तथा उन्होंने शस्त्रों में निपुण वीरांगनाओं की एक सेना भी तैयार कर रखी थी। इन वीरांगनाओं ने युद्ध में भाग लिया और वीरगति प्राप्त की। दूसरी ओर अह्निलवाड़ की रानी कलावती ने आत्मोत्सर्ग नहीं किया तो अलाउद्दीन ने उनसे बलपूर्वक विवाह किया और वह भी उनके पति के जीवित रहते। खिलजी की यह कुख्याति भी तीन-तीन जौहरों की भूमिका बनी।
मुस्लिम आक्रमण भारत में सातवीं सदी से प्रारम्भ हुए। राजा दाहिर पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् मुहम्मद बिन कासिम ने जीती गयी स्त्रियों के साथ बलात् सम्बन्ध बनाने की जो परम्परा प्रारम्भ की उसी का अनुसरण पश्चातवर्ती मुस्लिम लुटेरों ने किया। चचनामा के अनुसार कासिम ने दाहिर की बेटियों को तोहफा बनाकर खलीफा के पास भेजा। जब खलीफा उनके पास गया तो उन्होंने अपने पिता दाहिर की मृत्यु का बदला लेने के लिए कहा कि मुहम्मद बिन कासिम ने पहले से ही उनकी इज्जत लूट ली थी। खलीफा ने कासिम को बैल की चमड़ी में लपेटकर दमिश्क मंगवाया और उसी चमड़ी में बंद होकर दम घुटने से उसकी मृत्यु हो गई। तब दाहिर की पुत्रियों ने अपनी इज्जत बचाने के लिए आत्मोत्सर्ग किया।
इससे पूर्व युद्ध कितने ही हुए। क्या अशोक ने कलिंग को नहीं जीता? पर तब कोई जौहर नहीं हुआ। स्पष्ट है कि मध्यकाल में मुस्लिम आक्रान्ताओं की कुख्याति और क्रूरता ही जौहर का कारण बनी ताकि स्वाभिमानी हिन्दू स्त्रियों के शरीरों को ये विधर्मी हाथ भी न लगा सकें। जौहर करने के मुख्य हेतु को स्पष्ट करते हुए 'मुगल या हवस के सुलतान' में वाशी शर्मा ने लिखा है- 'महारानी पद्मिनी का अग्निकुण्ड में प्रवेश एक पल में लकड़ी को कोयला कर देने वाली दहकती आग में माँ समान कोमल महारानी और हजारों स्त्रियों का अंतिम प्रयाण मरकर भी किसी जिहादी के हाथ न आने का अतुल्य संतोष, मर कर भी सम्मान नहीं मरने देने का सुख, आने वाली पीढ़ी के वीर पुत्र अपनी जलती माताओं का प्रतिशोध जरूर लेंगे इस सन्देश के साथ उस ऊँची उठती आग में धुआँ हो जाने वाली राजमाताएँ और पुत्रियाँ..'।
महिला हो या पुरुष कुछ सैनिक होते हैं कुछ असैनिक। ये असैनिक पुरुष भी युद्ध में भाग नहीं लेते थे। कहने को तो यह भी कहा जा सकता है कि वे भी यदि एक तलवार लेकर शत्रु पर टूट पड़ते तो एक को तो मार ही सकते थे। जो इस कुतर्क का अब भी विस्तार करना चाहें उनकी सेवा में अत्यन्त विनम्रता से निवेदन है कि उक्त जौहर काल ही क्यों आज भी स्त्री के सामने अपनी इज्जत बचाने हेतु यही विकल्प रहते हैं। उस समय कौन क्या निर्णय लेती है उसकी आलोचना करने में हम अपने बुद्धि-चातुर्य को आजमायें यह उचित नहीं। पर यह विचार अवश्य करें कि क्या मजबूरी रही होगी उन पिताओं की, उन भाइयों की, जिन्होंने भारत-विभाजन के समय अपनी बच्चियों की इज्जत बचाने हेतु स्वयं उन्हें तलवार घोंप दी अथवा अग्नि के समर्पित कर दिया। जो जीवित किसी आतताई के हत्थे चढ़ गयीं उनकी मासूम सिसकियों की दास्ताँ पढ़ने के लिए, विभाजन की विभीषिका के काले इतिहास से गुजरना होगा। यहाँ अगर उन क्षणों को चित्रित करने लगें तो कोई भी पृष्ठ सीमा अल्प पड़ जायेगी।
अतः इस विवेचन के पश्चात् हमारा यही निवेदन है कि हम राजस्थान के गौरव को धूमिल करने का प्रयास न करें तो उचित होगा क्योंकि भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् वैसे भी जिन लोगों के हाथ में शिक्षा नीति तथा पाठ्यक्रमों के निर्माण का दायित्व था उन्होंने बड़ी बेशर्मी के साथ हमारे इतिहास को भ्रष्ट तथा विकृत करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है तो हम उसका निवारण करने के बजाय जाने-अनजाने में उनके सहायक क्यों बनें?

- अशोक आर्य
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

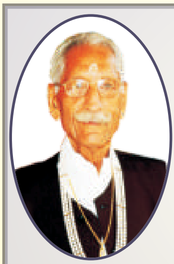
सत्यार्थ सौरभ
घर-घर
पहुँचावें।
कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थप्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित
सत्यार्थप्रकाश
अवश्य खरीदें।
घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थप्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर - ३१३००१
अब मात्र कीमत रु. 45 में
४००० रु. सैंकड़ा
शीघ्र मंगवाएँ

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वि-जन्मशताब्दी लेखमाला

५

मूल जी के किशोर-मन को झझकोरने वाली एक दुःखद घटना और हुयी। मूलशंकर जी जब 19 साल के हुए तो उनसे अत्यधिक प्यार करने वाले चाचा की मृत्यु हो गई। शिवरात्रि की घटना के पश्चात् बहिन की मृत्यु से उत्पन्न वैराग्य चाचा की मृत्यु के पश्चात् और दृढ़ हो गया। स्वयं उन्हीं के शब्दों में- ''इतने में जब उन्नीस साल की अवस्था हुई, तब जो मुझसे अति प्रेम करने वाले बड़े धर्मात्मा विद्वान् मेरे चाचा थे उनकी मृत्यु होने से अत्यन्त वैराग्य हुआ कि संसार में कुछ भी नहीं।''

हिन्दू-रक्षक महर्षि दयानन्द सरस्वती

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है। सम्पूर्ण जन्तु जगत् में केवल उसे ही यह विशेषता प्राप्त है। वह चिन्तन- मनन के द्वारा विचार करके करणीय और अकरणीय में भेद कर, करणीय को स्वीकार कर सकता है। नियम यह है कि उत्कृष्ट पुनर्जन्म के लिए उत्तम कर्म करने आवश्यक है। अतः उसे सारे कर्म विचार-पूर्वक श्रेष्ठ ही करने हैं। श्रेष्ठ विचार ही श्रेष्ठ कर्म के आधार हैं।

सृष्टि के प्रारम्भ में परमपिता परमात्मा ने सम्पूर्ण मानव जाति को जहाँ भाषा और ज्ञान प्रदान किया वहीं उसका स्वयं के प्रति, अन्य मानवों के प्रति, अपने पर्यावरण के प्रति तथा जंतु व वनस्पति जगत् के प्रति क्या कर्तव्य है, वह उनसे किस प्रकार व्यवहार करे कि धरती पर कहीं राग-द्वेष शेष न रहे तथा प्रीति की धारा सम्पूर्ण पृथ्वी पर प्रवाहित होती रहे इस हेतु वेद के रूप में वह निर्देशात्मक ज्ञान प्रदान किया। यह निर्देश अथवा ज्ञान सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक हैं, सभी के लिए हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का यह अपार उपकार था कि युगों युगों के पश्चात् उन्होंने प्राचीन भारतीय मनीषा के अनुकूल यह घोषणा की कि धर्म की आवश्यकता प्रथम मानव समूह को भी थी अतः धर्म का उद्भव भी प्रथम मानव समूह की उत्पत्ति के साथ हुआ। अतः धर्म परमात्म-प्रदत्त ही है। दूसरे शब्दों में यह कहना कि धर्म का उद्भव २१०० वा १६०० वर्ष पूर्व किसी मनुष्य द्वारा हुआ यह तर्क व प्राकृतिक न्याय की कसौटी पर ही खरा नहीं उतरता। आगामी लेखों में यथावसर इसकी चर्चा विस्तार से पाठकों के समक्ष आयेगी।

परन्तु हुआ क्या, समय-समय पर कुछ प्रसिद्ध मनुष्यों द्वारा अपने अनुयायी संगठन बनाकर अपने द्वारा प्रदत्त शिक्षाओं को उन अनुयायियों के मध्य धर्म का नाम देकर प्रचारित कर दिया गया। उन्होंने अपने अनुयायियों से अपेक्षा की कि वे उनके धर्म (जो कि वस्तुतः सम्बन्धित प्रवर्तक का मत मात्र है) का प्रसार करें। यद्यपि वेद-धर्म की विद्यमानता में किसी अन्य धर्म की आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि वह ईश्वरीय होने के कारण पूर्ण, पक्षपात-रहित, सनातन सत्य तथा सर्व कल्याणकारी है, परन्तु मनुष्यों की महत्वाकांक्षाओं को क्या कहियेगा जो अनेक मत-मतान्तरों के जन्म का कारण बनीं।

मनुष्य-जनित होने के कारण ये सभी तथाकथित धर्म पक्षपात सहित तो थे ही, एक अथवा अधिक वर्गों के प्रति प्रत्यक्ष शत्रुता से ग्रसित थे (जिस प्रकार यहूदी मत मिश्रवासियों के विरुद्ध था तो मुस्लिम मत यहूदियों के विरुद्ध, यही कारण है इनके अनुयायियों ने धर्म के नाम पर कल्पनातीत नर-संहार किये)।

यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि चलिए मत तो अनेक हो सकते हैं पर एक सभ्य समाज में किसी मत का विस्तार कैसे किया जाय? उसका मानवीय प्रकार क्या हो? देखा जाय तो इस प्रश्न का उत्तर अत्यन्त सरल है। जैसा कि पूर्व में कहा गया कि मनुष्य बुद्धिशील प्राणी है अतः ग्राह्य-अग्राह्य का निर्णय भी बौद्धिक विमर्श से सर्वश्रेष्ठ रूप से हो सकेगा। प्राचीन भारतीय पद्धति तो यही रही है। ऐसे वैचारिक विमर्शों को 'शास्त्रार्थ' नाम दिया गया। प्रसिद्ध शास्त्रार्थकर्त्ताओं में याज्ञवल्क्य, गार्गी, मंडन मिश्र, भारती देवी, शंकराचार्य के नाम प्रसिद्ध ही हैं। भारत की धरती पर मत-मतान्तर के प्रचार-प्रसार का एक ही मार्ग था जिसे महर्षि दयानन्द ने भी अपनाया और वह है-शास्त्रार्थ। महर्षि दयानन्द ने तत्कालीन हिन्दूसमाज में व्याप्त वेद-विरुद्ध मान्यताओं के साथ-साथ

नास्तिक मतों एवं सेमेटिक मतों का उन्हीं के ग्रन्थों के आधार पर सतर्क खण्डन किया। इसके मूल में उनका उद्देश्य अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि ही था। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में सहस्रों शास्त्रार्थों में भाग लिया। उनका स्पष्ट मत था कि सत्योपदेश के बिना मनुष्य जाति की उन्नति का अन्य कोई कारण नहीं है।

शास्त्रार्थ वह अवसर प्रदान करता है जिसमें किसी भी मनुष्य के लिए योग्य है कि वह पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् जिस मत को भी सत्य समझता हो उसे स्वीकार कर अपना जीवन पाथेय बना लें। कोई लड़ाई नहीं, जोर जबरदस्ती नहीं, खून खराबा नहीं। अपने मतों का विस्तार करने हेतु जो नाजायज प्रकार हैं उनके अन्तर्गत, लोभ-लालच के वशीभूत कर अथवा छल-पूर्वक तथा बल-पूर्वक मतान्तरण आते हैं। इस प्रकार से किसी व्यक्ति का मतान्तरण कराना घोर निन्दनीय है। इतिहास साक्षी है कि इस्लाम एवं ईसाई मत के प्रचार में उक्त प्रकारों का ही प्रयोग किया गया। बौद्ध आचार्यों ने इन प्रकारों से दूरी बनाए रखीं। यद्यपि आपको अनेक इस प्रकार के लेख मिल जायेंगे जो इस्लाम के शान्तिपूर्ण प्रसार की दुहाई देते फिरेंगे। इनके अनुसार विजेता मुस्लिम शासकों ने विजित प्रजा को सदैव विकल्प दिया कि वे चाहे तो इस्लाम स्वीकार कर लें। इनका प्रचार है कि इस्लाम की खूबियों के कारण लोगों ने इस्लाम ग्रहण किया। इससे अधिक असत्य क्या हो सकता है? ये लोग ये उल्लेख करना भूल जाते हैं कि उस विकल्प में जिजिया कर भी था अर्थात् जो इस्लाम ग्रहण न करे उसे अपनी आमदनी का एक हिस्सा मुस्लिम न होने के कारण चुकाना होगा। क्या यह दबाब नहीं है? वस्तुतः तो इस्लाम का प्रसार तलवार की नोंक पर हुआ है इस सत्य को प्रायः इतिहासकारों ने स्वीकार किया है।

मुहम्मद साहब ने अपने ऊपर तथाकथित रूप से अल्लाह द्वारा उतारे गए 'इस्लाम मत' के प्रचार हेतु अपने मक्का-निवास के समय में निरन्तर लोगों को समझाने का प्रयास किया नतीजा उनके लिए निराशाजनक ही रहा। कुल ७०-८० लोग ही इस धर्म में दीक्षित हो पाए। स्वयं उनके चाचा अबू तालीब, जो उनसे अत्यन्त स्नेह करते थे और सदैव उन्हें सुरक्षित रखते थे, ने इस्लाम स्वीकार करने से मना कर दिया। जब वे मृत्यु शैय्या पर थे तब भी मुहम्मद ने उनसे इस्लाम स्वीकार करने का आग्रह किया पर उन्होंने तब भी स्वीकार नहीं किया। उनकी बेटी जैनब के पति अर्थात् उनके दामाद ने भी बौद्धिक विमर्श अथवा रिश्तेदारी के नाते भी इस्लाम स्वीकार नहीं किया। यहाँ तक कि अपने कुछ साथियों के साथ मुहम्मद साहब को मदीना भागना पड़ा। अगर इस्लाम में वास्तव में ऐसी विशेषता होती, मानव कल्याण का जज्बा होता तो मक्का में जहाँ कि पैगम्बर पैदा हुए इसका कुछ तो प्रभाव होता? ऐसा कुछ नहीं हुआ। तब मुहम्मद ने तलवार उठायी। लूट में मिले माल और औरतों के लालच में लोग इसमें शामिल होते गए। बद्र की लड़ाई क्या थी? मुहम्मद का एक प्रयोग था जो सफल हुआ। कुल ३०० लोगों की सेना ने १००० सेना वाले मक्का के सरदारों को पराजित कर दिया। इसको इस रूप में प्रचारित किया गया कि यह असम्भव कार्य इसलिए सम्भव हुआ कि अल्लाह और उसके फरिश्तों ने मुहम्मद साहब की ओर से लड़ाई लड़ी।

उसके बाद इस्लाम का प्रसार मात्र एक भयानक खूनी दास्ताँ है। स्पेन और फ्रांस में रक्त की नदियों से लेकर भारत का लगभग ८०० वर्ष का इतिहास मुस्लिम शासकों के अत्याचारों से भरा पड़ा है। जिसका प्रमुख उद्देश्य हिन्दुओं को मत-परिवर्तन कर इस्लाम ग्रहण करने हेतु विवश करना रहा। इस्लाम तथा ईसाइयत का प्रसार कभी शास्त्रार्थ-विजयों की फलश्री नहीं रहा अर्थात् इनके विस्तार में बौद्धिक विमर्श कभी आधार नहीं रहा। ईसाइयों ने प्रायः राजसत्ता का सहारा तो लिया ही, छल-प्रयोग और लोभ-लालच को अपना प्रमुख हथियार बनाया। इन्होंने अस्पतालों का निर्माण बहुतायत में

कराया तथा अनेक सेवा प्रकल्प भी स्थापित किये, अनेक विद्यालय स्थापित किये। परन्तु इस सब के पीछे प्रमुख उद्देश्य सेवा नहीं बल्कि मतांतरण था। गरीब व भोली भाली भारतीय ग्रामीण जनता को अपने पाखण्डों से छल कर इन मिशनरियों ने अपना विस्तार किया और यह सब आज भी जारी है। दूर दराज के गाँवों में आदिवासियों के बीच उन्हें कुछ सुविधाएँ प्रदान कर उनका मत परिवर्तन कराने का कार्य धड़ल्ले से चल रहा है। आश्चर्य की बात है कि हिन्दू इस बात से बेखबर निश्चिन्त पड़ा था तब इसके हानिकारक परिणामों की ओर महर्षि दयानन्द ने और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने ही ध्यान दिया।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि हिन्दुओं की अपनी कमजोरियाँ भी पादरियों और मौलानाओं की सहायक बनीं। जन्मगत जाति-पांति जनित अस्पृश्यता और तदान्तर्गत अमानवीय अत्याचार हिन्दू समाज को तोड़ने में सहायक बने। इन शोषितों का अपनी छल-नीति के अन्तर्गत विधर्मियों द्वारा स्वागत किया गया, तो दूसरी ओर हिन्दुओं के बन्द दरवाजे घर वापसी में बाधक बने रहे। महर्षि दयानन्द से पूर्व तत्कालीन किसी भी सुधारक ने इस गंभीर समस्या की ओर ध्यान नहीं दिया। परन्तु ऋषि की पारदर्शी दृष्टि ने न सिर्फ समस्या के अत्यन्त घातक परिणामों को देख लिया वरन् उससे बचने के उपायों का आश्रय लेने की प्रेरणा देशवासियों को दी। इसके अन्तर्गत कुरआन तथा बायबिल को तर्क की कसौटी पर कस, विचारोत्तेजक सामग्री के रूप में सच्चा विश्लेषण उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में उपस्थित किया जिसने पादरियों और मौलानाओं को भौचक्का कर दिया। ऋषि के द्वारा उद्घाटित सत्य ने निर्विवाद रूप से यह साबित कर दिया कि जिन्हें ईश्वरप्रणीत ग्रन्थ कहा जाता है वे ग्रन्थ ईश्वर प्रणीत हो ही नहीं सकते। इससे भी आगे बढकर इन ग्रन्थों में निरूपित ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव व कार्यों का विश्लेषण कर घोषणा की कि इन ग्रन्थों में वर्णित ईश्वर भी ईश्वर के स्वाभाविक गुणों से रहित है। अतः इनका कथित ईश्वर न ईश्वर है और न ही ये ग्रन्थ ईश्वरोक्त हैं।

बुद्धि और तर्क प्राधान्य इस युग में, बायबिल और कुरआन में अनेक असम्भव और विज्ञान के विरुद्ध बातें होते हुए भी इनको ईश्वरीय मानने वालों की संख्या देखकर यही कहा जा सकता है कि आज भी जिस वस्तु को धर्म की संज्ञा दे दी जाय उसका बुद्धिवादी परीक्षण करने को कोई भी तैयार नहीं है। यह विडम्बना नहीं तो और क्या है? हम यहाँ यह फिर से कहना चाहेंगे कि स्वामी दयानन्द के उठाये प्रश्न आज भी अनुत्तरित हैं।

इस सन्दर्भ में ऋषि दयानन्द ने हिन्दुओं को चेता भी दिया कि वे समाज को तोड़ने वाले कार्यों को यदि बन्द न करेंगे, समाज में विषमता के बीज बोयेंगे तो मत-परिवर्तन की घटनाओं को रोकना सम्भव नहीं होगा। समस्या यह भी थी कि किसी कारण से मतान्तरित व्यक्ति पुनः अपने पूर्वजों के धर्म को अपनाना चाहे तो हिन्दुओं ने वापसी के सभी दरवाजे मजबूती से बन्द कर रखे थे। ऋषि दयानन्द ने ही सर्वप्रथम अलख जगायी कि जिन बन्धुओं ने किसी भी कारण से मत-परिवर्तन कर लिया है उनके लिए बड़ी उदारता-पूर्वक समाज के, हृदय के, दरवाजे खोलना युग की आवश्यकता है। हिन्दू समाज की रूढ़िवादिता तथा घोर अनुदारता ने किस प्रकार समाज के ताने-बाने को क्षति पहुँचायी थी यह एक उदाहरण से समझ सकते हैं। काला चंद राय एक ब्राह्मण था, जिसने बाद में इस्लाम ग्रहण कर लिया और मुसलमान बन गया। वह बंगाल के 'सुलेमान कर्रानी' (१५६५-१५७२ ई.) की सेना का एक बड़ा ही योग्य सेनापति था। नबाब की बेटी इस युवक पर मोहित हो गयी। परन्तु कालाचन्द अपना धर्म बदलने को तैयार नहीं था। पुत्री के प्रेम तथा विवशता के कारण अथवा हिन्दुओं की कट्टरता पूर्ण मानसिकता से भलीभाँति अवगत होने के कारण नबाब सहमत हो गया कि उसकी बेटी ही हिन्दू धर्म स्वीकार कर ले। जब कालाचन्द ने खुशी-खुशी यह बात अपने बड़ों को बतायी तो उन्होंने साफ मना कर दिया। इस बात से युवक बड़ा आहत हुआ और उसके मन में हिन्दू कौम के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न हो गया। प्रतिक्रिया में न केवल इस्लाम स्वीकार किया वरन् हिन्दुओं का जो कत्लेआम किया इससे इतिहास में उसे काला पहाड़ कहा गया। काला पहाड़ ने सुलेमान की सेना में भारी ख्याति प्राप्त की थी। १५६८ ई. में उसने उड़ीसा पर चढ़ाई की और वहाँ के राजा को पराजित किया तथा बाद में पुरी के जगन्नाथ मन्दिर को लूटा।

यह एक घटना हमने यहाँ

इसलिए दी है कि घर वापसी के दरवाजे बन्द करने से कौम को क्या नुकसान हुआ इस पर प्रकाश डल सके। पर हिन्दू समाज ने इससे कोई सबक लिया हो ऐसा नहीं लगता। महर्षि दयानन्द के अनन्य शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने इस समस्या पर विशेष ध्यान दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी को इन्हीं दिनों मुस्लिमों द्वारा वितरित की जा रही एक पुस्तक 'दाइए इस्लाम' प्राप्त हुयी। इसमें हर अच्छे-बुरे तरीके से हिन्दुओं को मुसलमान बनाने की बात कही गयी थी। हिन्दुओं के घर-मुहल्लों में जाकर औरतों को चूड़ी बेचने से, वैश्याओं को ग्राहकों में, नाई द्वारा बाल काटते हुए इस्लाम का प्रचार करने एवं मुस्लमान बनाने के लिए कहा गया था। विशेष रूप से ६ करोड़ दलितों को मुसलमान बनाने के लिए कहा गया था, जिससे मुसलमान जनसंख्या में हिन्दुओं के बराबर हो जायँ और उससे राजनैतिक अधिकारों की अधिक माँग करी जा सके। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने कलकत्ता प्रवास में जब एक लेख पढ़ा जिसमें कर्नल यू. मुखर्जी ने १९११ की जनगणना के आधार पर यह सिद्ध किया कि अगले ४२० वर्षों में हिन्दुओं की अगर इसी प्रकार से जनसंख्या कम होती गई तो उनका अस्तित्व मिट जायेगा। इसी बीच कांग्रेस के काकीनाडा के अध्यक्षीय भाषण में मुहम्मद अली ने ६ करोड़ अछूतों को आधा-आधा हिन्दू और मुसलमान के बीच बाँटने की बात कहकर आग में घी डालने का कार्य किया। तब हर प्रकार से इस विषय की गंभीरता को समझते हुए ११ फरवरी १९२३ को भारतीय शुद्धि सभा का गठन किया गया। महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा देहरादून में स्वयं एक मुसलमान को शुद्ध किया गया था जिसका नाम अलखधारी रखा था, उनके इस कार्य को आर्यसमाज ने किस प्रकार दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ाते हुए प्राणप्रण से हिन्दू जाति की रक्षा की, इसका संक्षिप्त विवरण हम अगले अंक में देंगे।

शुद्धि चक्र प्रवर्तन में तथा घर वापिसी के उपक्रम में आर्य समाज की महान् भूमिका की ओर ध्यान दिलाने हेतु निम्न घटना प्रस्तुत करना चाहेंगे।

परन्तु यहाँ इस सन्दर्भ में गाँधी जी की मनोदशा अवश्य दर्शाने का प्रयास करेंगे। क्योंकि जो गाँधी जी स्वामी श्रद्धानन्द और आर्य समाज को भला-बुरा कहते रहे, उन्हीं गाँधी जी के पुत्र हीरालाल की अंततः रक्षा आर्यसमाज ने ही की।

महात्मा गाँधी ने यंग इंडिया के २९ मई, १९२५ के अंक में 'हिन्दू मुस्लिम-तनाव- कारण और निवारण' शीर्षक से एक लेख में स्वामी श्रद्धानन्द जी पर लिखा- 'स्वामी श्रद्धानन्द जी भी अब अविश्वास के पात्र बन गये हैं। मैं जानता हूँ कि उनके भाषण प्रायः भड़काने वाले होते हैं। जिस प्रकार अधिकांश मुसलमान सोचते हैं कि किसी-न-किसी दिन हर गैरमुस्लिम इस्लाम को स्वीकार कर लेगा, दुर्भाग्यवश श्रद्धानन्द भी यह मानते हैं कि प्रत्येक मुसलमान को आर्य धर्म में दीक्षित किया जा सकता है। श्रद्धानन्द जी निडर और बहादुर हैं। उन्होंने अकेले ही पवित्र गंगातट पर एक शानदार ब्रह्मचर्य आश्रम (गुरुकुल) खड़ा कर दिया है। किन्तु वे जल्दबाज हैं और शीघ्र ही उत्तेजित हो जाते हैं। उन्हें आर्यसमाज से ही यह विरासत में मिली हैं।'

स्वामी दयानन्द पर गाँधी और लिखते हैं कि 'उन्होंने संसार के एक सर्वाधिक उदार और सहिष्णु धर्म को संकीर्ण बना दिया।' गाँधी के लेख पर स्वामी श्रद्धानन्द ने प्रतिक्रिया लिखी कि 'यदि आर्यसमाजी अपने प्रति सच्चे हैं तो महात्मा गाँधी या किसी अन्य व्यक्ति के आरोप और आक्रमण भी आर्यसमाज की प्रवृतियों में बाधक नहीं बन सकते।' श्रद्धानन्द अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहे।

हीरालाल गाँधी के इस्लाम स्वीकार करने पर जब गाँधी जी और कस्तूरबा असहाय हो गए थे तब आर्य समाज ने आगे आकर हीरालाल को पुनः वैदिक धर्म में दीक्षित किया और इस्लाम के ठेकेदारों को पटखनी दी, इसकी संक्षिप्त चर्चा करके आलेख के इस अंक को समाप्त करेंगे। आगामी क्रम में आर्य समाज के शुद्धिकार्य की विशेष चर्चा करेंगे।

जब हीरालाल गाँधी ने २८ मई १९३६ को इस्लाम ग्रहण किया तो उसका नाम अब्दुल्लाह रखा गया और अगले दिन इसकी सार्वजनिक घोषणा भी कर दी गयी। तब गाँधी जी व कस्तूरबा दोनों को निःसंदेह दुःख हुआ। गाँधी जी ने जो घुमा-फिरा कर लिखा उसमें इनकी पीड़ा को देखना कठिन नहीं है। जो गाँधी पूर्व में हिन्दुओं द्वारा शुद्धि के प्रयत्नों के घोर विरोधी रहे पर हिन्दुओं को इस्लाम में मतान्तरित किये जाने पर चुप रहे, अब उन्होंने इस सत्य को न केवल स्वीकार किया बल्कि कहा भी कि अगर बिना किसी सांसारिक प्रलोभन के, हृदय परिवर्तन से हीरालाल ने धर्म परिवर्तन किया है तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं है परन्तु वे जानते हैं ऐसा नहीं है। उन्होंने लिखा- शुद्ध हृदय के बिना किया हुआ धर्म परिवर्तन

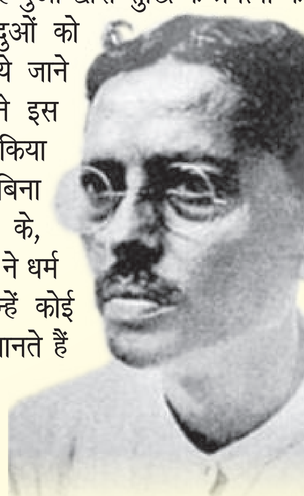

मेरी सम्मति में धर्म और ईश्वर का तिरस्कार है। धार्मिक मनुष्य के लिए विशुद्ध हृदय से न किया हुआ धर्म परिवर्तन दुःख की वस्तु है, हर्ष की नहीं।' परन्तु इतिहास साक्षी है कि इस्लाम प्रवेश कभी भी हृदय परिवर्तन से नहीं हुआ धन का लालच, सत्ता का लालच, तथा मौत का भय अथवा मतांतरित न होने पर होने वाली प्रत्यक्ष हानि का भय इसमें कारक बनीं।

उधर कस्तूरबा भी व्यथित थीं। अब्दुल्लाह गौ-मांस भक्षण कर रहा है इस सोच मात्र से वे हतप्रभ थीं। उन्होंने उन मुसलमानों के समक्ष भी अपना विरोध प्रकट करते हुए मार्मिक शब्दों में लिखा-

'कुछ लोगों ने मेरे लड़के को 'मौलवी' तक कहना शुरू कर दिया है। क्या यह उचित है? क्या आपका धर्म एक शराबी को मौलवी कहने का समर्थन करता है?.... यदि आप केवल हमारी फजीहत करना चाहते हैं, तो मुझे आप लोगों को कुछ भी नहीं कहना है। आप जितना भी बुरा करना चाहें कर सकते हैं। लेकिन एक दुखिया और बूढ़ी माता की कमजोर आवाज शायद आप में से कुछ एक की अन्तरात्मा को जगा दे। मेरा यह फर्ज है कि मैं वह बात आप से भी कह दूँ जो मैं अपने पुत्र से कहती रहती हूँ। वह यह है कि परमात्मा की नजर में तुम कोई भला काम नहीं कर रहे हो।

अंततः बा की अपील पर आर्य समाज को आगे आना पड़ा। मुम्बई आर्यसमाज के प्रधान विजयशंकर जी भट्ट के प्रयत्नों से अब्दुल्लाह पुनः हीरालाल बना। उस समय का हीरालाल का कथन अवश्य द्रष्टव्य है।

बम्बई, नवम्बर २०.१९३६

आदरणीय भद्रपुरुषों! बहिनों और भाईयो। नमस्ते।

कुछ लोग यह जानकर हैरान होंगे कि मैं पुनः क्यों हिन्दू बन गया हूँ। बहुत सारे मुसलमान और हिन्दू इस बारे में तरह तरह की अटकलें लगा रहे होंगे, पर मैं अपना हृदय सामने खोलकर रखे बिना नहीं रह सकता। आजकल धर्म के नाम पर जो कुछ चलता है, उसमें केवल सिद्धान्त ही शामिल नहीं हैं, परन्तु उसमें सिद्धान्तों के अलावा अपने धर्म अनुयायियों की संस्कृति, उनका सामाजिक जीवन और नैतिकता भी शामिल होती है। इन्हीं सबका अनुभव प्राप्त करने में मैंने इस्लाम धर्म ग्रहण किया था परन्तु मैंने जो कुछ देखा और अनुभव किया उसके आधार पर मैं कह सकता हूँ कि प्राचीन वैदिक धर्म के सिद्धान्त वैदिक संस्कृति, उसका साहित्य और भाषा उसके अनुयायियों का सामाजिक और नैतिक जीवन किसी भी दृष्टि से इस्लाम में या अपने देश में प्रचलित अन्य मतों या धर्मों से हीन नहीं है बल्कि उनसे बहुत उत्कृष्ट है। महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित वैदिक धर्म के सही स्वरूप को यदि हम समझ सकें तो हम यह जोर देकर कह सकते हैं कि जो भी सत्य या सार्वभौम सिद्धान्त इस्लाम या अन्य मतमतान्तरों में पाए जाते हैं, वे सब वैदिक धर्म से ही गए हैं। इसलिए यदि दार्शनिक दृष्टि से देखा जाए तो धर्मान्तरण जैसी कोई चीज नहीं है, केवल सत्य की तलाश ही एकमात्र तत्व है।

जैसे कि कुछ सार्वभौम सत्य कतिपय साम्प्रदायिक सिद्धान्तों से मिलकर अन्य मतों के विकृत होने का कारण बन गए, वैसे ही भारत के कुछ मुसलमानों के साथ सम्बन्ध होने के बाद मैं यह कह सकता हूँ कि मोहम्मद साहब के धार्मिक सिद्धान्तों और फरमानों से आज के मुसलमान बहुत दूर चले गये हैं। जहाँ तक मैं जानता हूँ 'हजरत खलीफा उमर' ने अन्य धर्मावलम्बियों के धार्मिक स्थानों और संस्थानों को नष्ट करने का कभी आदेश नहीं दिया जो कि वर्तमान समय में हमारे देश की ज्वलन्त समस्या है।

इन परिस्थितियों और तथ्यों को देखते हुए मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि मैं अब किसी भी तरह इस्लाम की और अधिक सेवा नहीं कर सकता।

जैसे कोई नीचे गिरा हुआ व्यक्ति धीरे-धीरे ऊँचाई की ओर चलते हुए अपने मूल स्थान तक पहुँच जाता है, वैसे ही मैं भी महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक धर्म के सत्य सिद्धान्तों को पहचानने और उन तक पहुँचने का प्रयत्न कर रहा हूँ ये सिद्धान्त सत्य हैं, मौलिक हैं, सार्वभौम हैं और बिना किसी देश, जाति या सम्प्रदाय के भेदभाव के समग्र मानव समाज के लिए वैसे ही उपयोगी हैं जैसे कि सूर्य की किरणें बिना किसी भय और पक्षपात के। ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' और 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' आदि स्वरचित प्रसिद्ध ग्रन्थों में इनका समर्थन और प्रतिपादित किया है।

इस प्रकार आर्य समाज के प्रयत्नों से और स्वामी दयानन्द सरस्वती के उपदेशों के अनुग्रह से मैं पुनः अपने पितृ-धर्म और मातृ-संस्कृति की चरण-शरण में आ रहा हूँ, यदि मेरे माता-पिता, रिश्तेदार और मित्रगण इस समाचार को सुनकर प्रसन्न हुए हों, तो मैं उनसे आशीर्वाद की याचना करता हूँ।

अन्त में, मैं इतना ही कहता हूँ कि मेरी रक्षा करो, मुझ पर दया करो और मुझे क्षमा करो। बम्बई आर्य समाज के कार्यकर्त्ताओं का और यहाँ उपस्थित अन्य सभी सज्जनों का मैं हृदय से धन्यवाद करता हूँ।

सबको 'नमस्ते' के साथ अभिवादन करके मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ:- **'तमसो मा ज्योतिर्गमय।'**

ओ३म् शान्तिः। – हीरालाल गाँधी (सन्दर्भ- सार्वदेशिक १९३६)

क्रमशः ....

सत्यार्थप्रकाश और समग्रक्रान्ति

वैद्य गुरुदत्त का जन्म ८ दिसम्बर १८९४ को लाहौर में हुआ। आपने रसायन शास्त्र में एमएस.सी. परीक्षा उत्तीर्ण की। आप नेशनल स्कूल लाहौर के मुख्याध्यापक रहे। जीविका निर्वाह के लिए आपने वैद्यक वृत्ति को अपनाया तथा साथ ही लेखन भी करने लगे। आपने शताधिक उपन्यासों की रचना की। आपने वेद, उपनिषद, दर्शन तथा गीता आदि ग्रन्थों की व्याख्याएँ की। आपने दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के आग्रह पर 'वीर हकीकत राय' पुस्तक लिखी। आपका ८ अप्रैल १९८१ को दिल्ली में निधन हो गया। इस लेख में सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित विभिन्न क्रान्तिकारी आयामों का विवरण दिया गया है।

ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में समग्र क्रान्ति उत्पन्न करने वाली एक मात्र पुस्तक स्वामी दयानन्द कृत 'सत्यार्थ प्रकाश लिखी गई थी।'

देश में कई नेता हुए हैं और हो रहे हैं जो समाज में समग्र क्रान्ति उत्पन्न करने का प्रयास करते रहे हैं अथवा कर रहे हैं। यह निर्विवादरूप में कहा जा सकता है कि वे न तो समग्र क्रान्ति के अर्थ जानते हैं, न ही उनके प्रचार समग्रक्रान्ति लाने में सक्षम हैं। यह श्रेय एकमात्र सत्यार्थप्रकाश को ही दिया जा सकता है।

तनिक विचार करें कि जब यह पुस्तक लिखी गई थी, तब भारत देश की अथवा भारतीय समाज की अवस्था क्या थी? उसकी तुलना आज की अवस्था से की जाये तो स्पष्ट हो जायेगा कि देश में समग्र क्रान्ति आई है और उसमें इस पुस्तक का सर्वश्रेष्ठ योगदान है।

समग्रक्रान्ति से हमारा अभिप्राय राजनीतिक, धार्मिक, सामजिक, वैचारिक, दार्शनिक, अर्थात् यह कि सब मानव क्रियाकलापों से है। इसका अर्थ है कि देश में रहने वालों के प्रत्येक व्यवहार में आमूलचूल परिवर्तन हो रहा है।

सत्यार्थ प्रकाश लिखा गया १८७४ में। उस समय देश की अवस्था का दर्शन करने से पता चलता है कि-

१. पूर्ण भारतवर्ष हिमालय से समुद्र पर्यन्त और सिन्धु नदी से ब्रह्मपुत्र पर्यन्त, वरन् इन सीमाओं से भी पार, बर्मा और पख्तूनिस्तान भी विदेशीय (अंग्रेजों के) लोह नियंत्रण में जकड़ा हुआ था। सन् १८५७ का स्वातन्त्र्य संग्राम पूर्ण पराजय को प्राप्त हो चुका था और अभी देश में कोई राजनीतिक सभा अथवा व्यक्ति 'चूं' करता भी दिखाई नहीं देता था। उस समय सत्यार्थ प्रकाश में लिखे यह शब्द अविस्मरणीय हैं। स्वामी जी ने लिखा है-

'कोई कितना ही करे,परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।' (सत्यार्थ प्रकाश आठवाँ समुल्लास)

तिलक जी का नारा 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' बहुत पीछे १९०६ में घोषित हुआ और कहा जाता है कि तिलक जी ने यह नारा श्रीरानाडे से प्राप्त किया था और उन्होंने यह 'सत्यार्थ प्रकाश' में पढ़ा था।

२. धार्मिक क्षेत्रों में पेड़ों, पत्थरों, मिट्टी के खिलौनों, घर में लगी कीलियों (जिन्हें पीर कहा जाता था) आदि के पूजन को धर्म समझा जाता था। प्रातः शिवालय जाकर जल चढ़ाना और दिन भर झूठ फरेब का व्यापार करना मुक्ति का साधन समझा जाता था।

३. सामाजिक व्यवहार में अछूतों और स्त्रियों को पढ़ने, विशेषरूप से वेद पढ़ने-सुनने से वंचित रखा जाता था। स्त्रियों से मानवेतर व्यवहार किया जाता था। सती प्रथा और विधवाओं के पुनर्विवाह में बाधा से, उन पर अत्याचार किया जाता था।

पूर्ण भारतीय समाज, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई समझे जाते हैं, छुआछूत, ऊँच-नीच और अधिकारों में भेदभाव इत्यादि अनेक प्रकार के भ्रम मूलक विश्वासों में फंसे हुए थे।

पशुओं, यहाँ तक कि मनुष्यों की भी देवताओं के सम्मुख बलि चढ़ाकर उनकी हत्या की जाती थी। इन सबको धर्म माना जाता था।

४. दार्शनिक दृष्टि से भी भारतीय घोर पतन की ओर जा रहे थे।

कोई परमात्मा को गोपियों से रास रचाने वाला और कोई श्वेत-दाढ़ी-मूँछ वाले, सातवें आसमान पर बैठे हुए, पृथिवी से सम्पर्क बनाने के लिए फरिश्तों का आश्रय वाला मानते थे। कहीं परमात्मा को मुसलमानों के भय से भयभीत कुँए में जाकर छुप जाने वाला मानते थे। और प्रायः अनेकानेक देवी-देवताओं को परमात्मा का स्वरूप माना जाता था। यहाँ तक कि कई लोग परमात्मा को वाराह इत्यादि के स्वरूप में अवतार लेने वाला मानते थे।

५. जीवात्मा के विषय में तो बहुसंख्यक लोग इसे भ्रम मानते थे। उनके विचार में सब कुछ ब्रह्म (परमात्मा) ही है, ऐसा समझते थे।

वस्तुस्थिति यह थी कि देश के चोटी के विद्वानों से लेकर अनपढ़ सामान्य बुद्धि के लोगों तक 'अहं ब्रह्मास्मि' के घोर अज्ञानरूपी अन्धकार में फंसे हुए थे।

६. अनपढ़, मूर्ख, चरित्रहीन लोग समाज में धर्म पुजारी बने हुए थे। देश में धनी-मानी, पढ़े-लिखे लोग प्रलोभनों में फंसे हुए अथवा स्थिति से भयभीत विदेशियों, विधर्मियों और अन्यायियों की चाटुकारी करते नहीं थकते थे। निर्धन बेचारे भूखे पेट बच्चों और औरतों को विधर्मियों के हवाले कर रहे थे। मध्यम वर्ग के लोग अपनी जीविकोपार्जन में लगे हुए देश, राष्ट्र, समाज और धर्म-कर्म को विस्मरण कर चुके थे।

ऐसे समय में महर्षि स्वामी दयानन्द ने यह ग्रन्थ प्रकाशित करवाया और इसने देश में क्रान्ति का सूत्रपात कर दिया।

यहाँ क्रान्ति के अर्थ का वर्णन कर दिया जाय तो ठीक होगा। कठिनाई से पार करने वाली समस्या को द्रुतगति से बदल देना, क्रान्ति कहाती है।

हमारा विश्वास है कि यह क्रान्ति पूर्ण होगी क्योंकि इसके सम्मुख सत्य और मानव कल्याण ही लक्ष्य है। और यह लक्ष्य, जैसे सत्यार्थ प्रकाश में वर्णन किये गये हैं, संक्षेप में इस प्रकार कहे जा सकते हैं-

१. वेद सब सत्य विद्याओं के उपदेश हैं।

२. मानव कल्याण की सब बातें वेद में हैं।

३. परमात्मा एक है। इसके अनेक नाम हैं। गुण और कार्य अनेक होने के कारण। इन्द्र, वरुण, विष्णु आदि नाम भिन्न-भिन्न गुणों के कारण परमात्मा का ही वर्णन करते हैं।

इस पर भी परमात्मा का 'ओ३म्' सर्वश्रेष्ठ नाम है। इससे परमात्मा सत्-चित्-आनन्द, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, शरीर रहित, अविकारयुक्त, नस-नाड़ियों के बिना सम्पूर्ण विश्व का संचालन करने वाला, सर्वत्र पवित्र, पाप रहित, स्वयंभू, सर्वज्ञ और अपने ज्ञान को ठीक-ठीक सब को देने वाला एवं सबका कल्याण करने वाला शाश्वत, अविनाशी तत्त्व है।

४. ऐसी सत्ता के चिन्तन और पूजन से मनुष्य का कल्याण होता है। इस पूजन और चिन्तन के लिए सर्वश्रेष्ठ नाम 'ओ३म्' है। सब आर्यजनों को परमात्मा की स्तुति अर्थात् गुण और कर्म का चिन्तन करना चाहिए।

५. मनुष्यों में केवल दो वर्ग ही हैं। दैवी प्रवृत्ति वाले और आसुरी प्रवृत्ति वाले। दैवी प्रवृत्ति पालन करने योग्य है। आसुरी प्रवृत्ति घोर पतन का कारण होती है।

६. स्वहितकारी धर्मों में मनुष्य स्वतंत्र है और परहितकारी धर्मों में समाज के अधीन है।

७. गुण, कर्म, स्वभावानुसार कार्य, पद और प्रतिकार प्रत्येक का अधिकार है।

८. परमात्मा का अस्तित्व एक वैज्ञानिक तथ्य है। अतः आर्य लोग आस्तिक होते हैं।

९. कर्म का फल मिलता है। इस जन्म में अथवा किसी भावी जन्म में। कर्म के फल से कोई बच नहीं सकता।

१०. मनुष्य अपने भविष्य को अपने कर्मों से ही सुधार सकता है। बिना प्रयत्न किए फल नहीं मिलता।

११. भारतवर्ष का भूतकाल बहुत उज्ज्वल रहा है और भविष्य भी उज्ज्वल होगा। इसमें संशय नहीं। कारण यह कि वेद निधि भारत के पास अभी तक सुरक्षित रखी है। यह परमात्मा का ज्ञान है।

१२. इस भूमण्डल में भारतवर्ष ही एक ऐसा देश है जिसका इतिहास सृष्टि रचना के समय से मिलता है। सृष्टि रचना का सत्य वृत्तान्त वेद से आरम्भ होकर भारतीय वाङ्मय में विशद् रूप से मिलता है।

१३. वेद ज्ञान से विच्छिन्न हो जाने के कारण अन्य देश सत्य से दूर हो गए हैं। वेद की शरण में आने पर ही वे सत्य ज्ञान का भोग कर सकेंगे।

१४. सत्य ज्ञान की परख वेदादि प्रामाणिक ग्रन्थों से ही हो सकती है, परन्तु इसकी एक अन्य परख भी है, वह प्रत्यक्षादि प्रमाण।

संक्षेप में, यह है सत्यार्थ प्रकाश अर्थात् पूर्ण जगत् के वास्तविक अभिप्राय को समझाने वाला ग्रन्थ। भारत देश के घोर पतन की ओर जाते-जाते हाथ पकड़ कर सन्मार्ग दिखाने वाला ग्रन्थ, सिद्धान्ततः यह पृथ्वी के पूर्ण मानव समाज का पथ-प्रदर्शन करने वाला ग्रन्थ है।

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

- **सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो।** सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके, एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:-
- सत्यार्थप्रकाश के प्रचार हेतु कृपया निम्नानुसार सहयोग कर **लागत मूल्य से आधी कीमत में** सत्यार्थप्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

राशि	प्रतियों की संख्या	राशि	प्रतियों की संख्या
१५००००	दस हजार	११२५००	७५००
७५०००	५०००	३७५००	२५००
१५०००	१०००	इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे।	

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य — मंत्री-न्यास
भंवरलाल गर्ग — कार्यालय मंत्री
डॉ.अमृत लाल तापड़िया — उपमंत्री-न्यास

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

''सत्यार्थ-भूषण'' पुरस्कार ₹ 5100

कौन बनेगा विजेता

- न्यास की मासिक पत्रिका सत्यार्थ सौरभ का सदस्य होना आवश्यक है।
- हल की हुयी पहेली अन्तिम तिथि से पूर्व न्यास कार्यालय में पहुँचे यह सुनिश्चित करें।
- अपना सत्यार्थ सौरभ सदस्यता क्रमांक हल की हुयी पहेली के ऊपर अवश्य अंकित करें।
- लिफाफे के ऊपर 'सत्यार्थप्रकाश पहेली क्रमांक' अवश्य अंकित करें।
- आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
- विश्व भर के लोगों से सत्यार्थ सौरभ मासिक पत्रिका के अन्तर्गत 'सत्यार्थकाश पहेली' में भाग लेने का अनुरोध है।
- वर्ष भर में एक (१) के स्थान पर चार (४) पुरस्कारों के साथ ही नियमों में सकारात्मक परिवर्तन कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि वर्ष में एक बार भाग लेने वाले/अथवा एक बार ही सफलता प्राप्त करने वाले भी पुरस्कार से वंचित न हों।
- पहेली का सही हल प्रेषित करने वाले प्रतिभागियों को ४ भागों में विभक्त किया जावेगा।
  - (अ) सम्पूर्ण वर्ष में समस्त १२ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (ब) सम्पूर्ण वर्ष में ८ से ११ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (स) सम्पूर्ण वर्ष में ५ से ७ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (द) सम्पूर्ण वर्ष में १ से ४ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
- वर्षान्त में प्रत्येक समूह में से एक विजेता का चयन (लाट्री द्वारा) किया जाकर पुरस्कृत किया जावेगा।
- पुरस्कार राशि क्रमशः ₹५१००, ₹११००, ₹७०० तथा ₹५०० होगी। अन्य सभी नियम पूर्वानुसार।

₹5100 का पुरस्कार प्राप्त करें ''सत्यार्थ सौरभ'' के सदस्य बनें

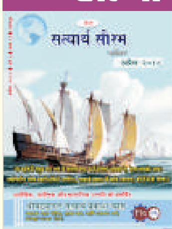

अविलम्ब बहुप्रशंसित पत्रिका 'सत्यार्थ सौरभ' के सदस्य बनें, जो पहले से सदस्य हैं अपना नवीनीकरण करावें और सत्यार्थ सौरभ में छप रही 'सत्यार्थप्रकाश पहेली' में भाग लेने की पात्रता प्राप्त करें और पावें ₹5100 का पुरस्कार।

इस अंक में सत्यार्थप्रकाश पहेली नहीं दी जा रही है।

क्रोध

हममें कौन नहीं जानता कि क्रोध करना बुरा है, फिर भी हम क्रोध के चंगुल से बच नहीं पाते। क्रोध अन्तःकरण की वह वृत्ति है, जो इच्छा की पूर्ति में बाधा आने से उत्पन्न होती है। वह वृत्ति केवल अन्तःकरण तक अपने को सीमित नहीं रखती, वरन् इसकी प्रतिक्रिया शरीर पर भी होती है। आँखें लाल हो जाती हैं, ओठ फड़कने लगते हैं और शरीर थर-थर काँपने लगता है। चेहरा तन जाता है और मनुष्य खूँखार दिखने लगता है। क्रोध धीरे-धीरे विवेक पर पर्दा डाल देता है, जिससे बुद्धि उचित-अनुचित का विचार नहीं कर पाती। गीता के अनुसार क्रोध मनुष्य के विनाश का कारण होता है। वहाँ बताया गया है कि क्रोध से सम्मोह पैदा होता है, जिससे भले-बुरे का विचार ढक जाता है। इसे 'स्मृति-विभ्रम' कहकर पुकारा गया है। क्रोध के आवेश में हम भूल जाते हैं कि ये हमारे आचार्य हैं, पूज्य हैं, माननीय हैं। इस प्रकार के 'स्मृति-विभ्रम' से 'बुद्धिनाश' होता है। मनुष्य नहीं समझ पाता कि उसके लिए क्या करणीय है और क्या अकरणीय। फलस्वरूप वह नष्ट हो जाता है।

बचपन में कहानी पढ़ी थी कि एक महिला ने एक नेवला पाल रखा था। एक दिन अपने छोटे शिशु के पास नेवले को छोड़ वह पानी लेने कुएँ पर गयी। जब लौटी तो उसने देखा कि नेवला दरवाजे पर खड़ा हो उसकी ओर मुँह उठाकर अभ्यर्थना कर रहा है। नेवले का मुँह रक्त से सना देख महिला ने सोचा कि नेवला उसके छोटे बच्चे को मारकर खा गया है। उसने आव देखा न ताव, क्रोध के आवेश में पानी का घड़ा नेवले के सिर पर दे मारा। नेवले का तत्क्षण काम तमाम हो गया। महिला भागकर अपने बच्चे को देखने कमरे में घुसी, तो क्या देखती है कि उसका बच्चा नीचे जमीन पर बिछौने में पड़ा खेल रहा है और उसी के पास एक विषधर सर्प के तीन-चार टुकड़े रक्त में लथपथ हो पड़े हैं। महिला जान गयी कि नेवले ने ही उसके बच्चे की जान बचायी है। उसे अपनी धीरजहीनता और अविवेक पर बड़ी ही ग्लानि हुई, पर अब क्या हो सकता था।

यह क्रोध का परिणाम है। क्रोधावेश पैदा होने पर बुद्धि कुछ समझने से इनकार कर देती है। हमारी चेतना तब क्रोध के रंग में रंग जाती है।

कथा आती है कि जब कवि रामचरित्र लिख रहे थे, तो उन्होंने वर्णन किया कि राम-रावण युद्ध के समय लंका में एक विशेष प्रकार के सफेद फूल खिले हुए थे। जब हनुमान जी को यह मालूम हुआ तो उन्होंने आपत्ति की और कहा कि फूल सफेद नहीं लाल थे। पर कवि ने इसे स्वीकार नहीं किया। तब बात राम तक गयी और कवि तथा हनुमान दोनों ने श्रीराम से इसका फैसला चाहा। राम बोले, 'हनुमान! कवि ने जो लिखा है, वही सत्य है। फूल सफेद ही थे। पर तुम तब क्रोधावेश में थे- इसलिए फूल तुम्हें लाल दिख रहे थे!'

क्रोध से बचने का एक सार्थक उपाय यह है कि क्रोध आने पर उस स्थान का तुरन्त त्याग कर दें। दूसरा उपाय यह है कि अपने मन में ऐसे व्यक्ति का चित्र लाकर खड़ा कर लें जिससे वह सबसे अधिक प्यार करता है। तीसरा उपाय ऐसा है कि जब भी क्रोध की वृत्ति जागे, तो उस पर यह संस्कार डालने का अभ्यास करें कि 'अभी नहीं, कुछ देर बाद क्रोध की घटना पर विचार करूँगा। इससे क्रोध का उफाल धीरे धीरे दूर हो जायेगा और हम घटना पर उसके सही परिप्रेक्ष्य में विचार कर सकेंगे। हाँ कभी-कभी क्रोध इतना अचानक और तेज होता है कि बवंडर के समान हमारे मन को छा लेता है। हमें उसका भान तब होता है, जब हम क्रोध कर चुके होते हैं और उसकी प्रतिक्रिया हो चुकी होती है। पर हमें निराश नहीं होना चाहिए। उपर्युक्त तीन उपायों का धैर्यपूर्वक अभ्यास हमें धीरे-धीरे क्रोध पर नियंत्रण की शक्ति देगा।

पर यह स्मरण रहे कि क्रोध नहीं करने का तात्पर्य कायरता नहीं है। जहाँ किसी को सुधारने के लिए क्रोध करना आवश्यक हो, वहाँ उसका प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। हमें केवल यहीं ध्यान रखना चाहिए कि हम क्रोध की वृत्ति को अपने वश में रखें, हम स्वयं उस वृत्ति के वश में न हो जायें। हम काटने से तो परहेज करें, फुफकारने से नहीं।

-स्वामी आत्मानन्द

(साभार- आत्मोन्नति के सोपान)

अशुभ कर्म क्या हैं? और शुभ कर्म क्या हैं?

मनुष्य कर्म तीन साधनों से करता है - मन से, वाणी से और शरीर से। मन, वाणी और शरीर से किए कर्म शुभ-अशुभ फल को देने वाले होते हैं। महर्षि मनु ने मनुस्मृति (१२-५,६,७) में १० अशुभ कर्म बताए हैं। उनके उलट १० ही शुभ कर्म हैं। इनमें तीन मानसिक कर्म, चार वाचिक कर्म और तीन शारीरिक कर्म हैं।

मन के द्वारा किए जाने वाले तीन अशुभ कर्म -

१. दूसरे की वस्तु चुराने की इच्छा करना, उसकी आज्ञा के बिना दूसरे की वस्तु लेने का मन में विचार कर लेना।
२. किसी से ईर्ष्या-द्वेष करना, किसी दूसरे का बुरा सोचना, मन में चाहना कि दूसरे का अहित हो जाए- उसे दुःख और क्लेश मिले।
३. कोई गलत काम करने का निश्चय कर लेना।

वाणी से किए जाने वाले चार अशुभ कर्म-

१. कठोर भाषा बोलना, दूसरे को चुभने वाली बोली बोलना।
२. झूठ बोलना, जो मन में है उससे उलट बोलना।
३. चुगली करना, निन्दा करना, किसी के गुणों को अवगुण करके बताना।
४. जान बूझ कर बात को उड़ाना, बात का बतंगड़ बनाना, किसी बात को बिगाड़ कर करना, किसी बात को बढ़ा-चढ़ा कर करना।

शरीर से किए जाने वाले तीन अशुभ कर्म -

१. चोरी करना, मालिक की आज्ञा और इच्छा के बिना उसके पदार्थ को ले लेना।
२. हिंसा करना, बिना अपराध किसी को ताड़ित करना।
३. व्यभिचार करना, घर में पत्नी के होते हुए परस्त्री से यौन सम्बन्ध बनाना।

इन दस अशुभ कर्मों के विपरीत ही दस शुभ कर्म जान लेना चाहिए।

मन में दूसरे की वस्तु स्वामी की आज्ञा से ही लेने की सोचना, दूसरों का भला चाहना, सही काम करने का निश्चय करना।

ये तीन मन के द्वारा किए जाने वाले शुभ कर्म हैं।

दूसरों के साथ मीठी वाणी बोलना, सत्य बोलना, किसी की भी चुगली से बचना, कोई बात जितनी हो उतनी ही करना।

ये चार वाणी के द्वारा किए जाने वाले शुभ कर्म हैं।

चोरी, हिंसा व्यभिचार का त्याग और परोपकार करना ही शरीर के द्वारा किए जाने वाले शुभ कर्म हैं।

मनुष्य मन से जो शुभ-अशुभ कर्म करता है उसका फल मन से ही मिलता है। मन द्वारा किए शुभ कर्म के फलस्वरूप मन प्रसन्न होता है और अशुभ कर्म के फलस्वरूप मन दुखी होता है। वाणी से किए कर्मों का फल वाणी से मिलता है। वाणी से किए अशुभ कर्मों के फल के रूप में अगला जन्म किसी पशु या पक्षी का मिलता है। शरीर से किए शुभ-अशुभ कर्मों का फल शरीर से सुख-दुख के रूप में मिलता है। शरीर के किसी अंग से किए अशुभ कर्म के फलस्वरूप इस जन्म में या अगले जन्म में रोगी होना और शुभ कर्म के कारण निरोगी रहना।

केवल मनुष्य योनि में किए कर्म ही शुभ-अशुभ फल देते हैं क्योंकि मनुष्य में मनन शक्ति है, वह विचार करके कर्म करता है। मनुष्य से भिन्न योनियाँ स्वभाव से कर्म करती हैं, अतः उनका कर्म फलदायक नहीं होता।

- कृष्ण चन्द्र गर्ग
८३१, सेक्टर-१०, पंचकूला (हरि.)
चलभाष- ०१७२-४०१०६७९
kcg831@yahoo.com

आज हमारी पाँच माताओं की हो रही दुर्दशा

हमारे हिन्दू धर्म (वैदिक धर्म) में पाँच माताओं का विशेष महत्व है। वे हैंः-

१. जन्म देने वाली माता।
२. गऊ माता।
३. भारत माता।
४. वेद माता।
५. गंगा माता।

आज इन पाँचों माताओं की दुर्दशा, अवहेलना व अनदेखी हो रही है जिससे देश पतन की ओर अग्रसर है। इनकी दशा सुधारने से ही देश उन्नति व समृद्धिशाली बन सकेगा। इनका संक्षिप्त वर्णन इस भाँति हैः-

१. जन्म देने वाली माता

आज नौजवान बच्चे शादी होने के बाद, जहाँ माता-पिता की सेवा करनी चाहिए, उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए, उनकी सुख-सुविधा का ध्यान रखना चाहिए, इसकी बजाय वे अपने माता-पिता को वृद्ध-आश्रम में भर्ती कर देते हैं और उनकी सेवा, सद् उपदेशों व अनुभवों से वंचित हो जाते हैं। यदि कोई परिवार माता-पिता को घर में रखते भी हैं तो वे उनकी सेवा करना तो दूर रहा उनकी तरफ कोई ध्यान भी नहीं देते हैं। यह बात सभी परिवारों में तो नहीं है, परन्तु अधिकतर घरों में वृद्ध माता-पिता की अनदेखी की जा रही है इसलिए आज जन्म देने वाली माताओं की स्थिति दयनीय है।

२. गऊ माता

हमारे हिन्दू धर्म (वैदिक धर्म) में गऊ माता का बहुत बड़ा महत्त्व है, कारण इसके रोम-रोम में परोपकार की भावना व्याप्त है। इसका दूध, घी, दही, छाछ सभी चीजें मनुष्य के लिए लाभकारी हैं। इसकी एक यह विशेषता है कि इसका मूत्र और गोबर कभी भी दुर्गन्ध नहीं मारता और इसके मूत्र व गोबर से उत्तम खाद बनता है जिसको खेत में डालने से उत्तम अन्न पैदा होता है और पौष्टिक होता है जिसके खाने से शरीर स्वस्थ रहता है साथ ही जमीन की उत्पादन शक्ति भी बढ़ती है। जबकि रासायनिक खाद से धीरे-धीरे कम होती जाती है। इसलिए गऊ के मूत्र तथा गोबर से बनी हुई खाद उत्तम कहलाती है। गाय के मरने के बाद उसकी खाल व हड्डी भी काम आती है। इसके बछड़े भी हल जोतने के काम आते हैं। ऐसी गौ माता को भी दूध बन्द होने के बाद कसाईयों को काटने के लिए बेच दिया जाता है या वे गली-कूचों में मल खाती हुई घूम रही होती हैं। आज कल देशी नस्ल की गऊएँ कम होती जा रही हैं और विदेशी नस्ल की गऊएँ बढ़ती जा रही हैं। कारण विदेशी गऊओं से दूध अधिक होता है इसलिए देशी गऊएँ अधिकतर कटने चली जाती हैं, जबकि देशी नस्ल की गाय का दूध कम जरूर होता है पन्तु पौष्टिक व लाभदायक अधिक होता है। परन्तु दुःख है कि किसान पैसे के लोभ में उसको कसाईयों के हाथ बेच देता है और वे काट दी जाती हैं। इस प्रकार भारत में गऊओं की बड़ी दुर्दशा है। गो-हत्या बन्द होने से ही यह समस्या हल होगी।

३. भारत माता

भारत माता की हालत इस समय बहुत ही खराब है। यहाँ पाकिस्तान और बंगलादेश से आतंकवादी आते हैं और हर दिन निर्दोष हिन्दुओं की हत्या कर देते हैं। भारत में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, तरफदारी, लूट-खसोट बहुत हो रही है। देश में अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड बहुत अधिक बढ़ा हुआ है जिससे लोगों का जीवन बहुत ही अधिक

दुःखमय बना हुआ है, इसलिए देश में वैदिक ज्ञान की आवश्यकता है जिससे अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड समाप्त हो सकता है, इसके लिए यहाँ गाँव-गाँव में गुरुकुल खोलने की आवश्यकता है, जिनमें बच्चे व बच्चियाँ पढ़कर वैदिकधर्मी बनें जिससे इस अन्धविश्वास के वातावरण को दूर किया जा सकता है। जब तक वैदिक धर्म नहीं चलेगा तब तक यह मूर्ति-पूजा, श्राद्ध-तर्पण, भूत-प्रेत, कण्ठी-डोरी आदि अन्धविश्वास ऐसे ही चलता रहेगा और देश पतन की ओर बढ़ता रहेगा जिससे देश की दुर्दशा ऐसी ही रहेगी।

४. वेद माता

सृष्टि की आदि से लेकर महाभारत तक पूरे विश्व में वैदिक धर्म ही था। महाभारत के विश्व युद्ध में विश्व के अधिकतर वीर, योद्धा, वैदिक विद्वान् आचार्य आदि के समाप्त हो जाने से कम पढ़े-लिखे स्वार्थी ब्राह्मणों के हाथों में वेद प्रचार का कार्य करना आ गया। उन्होंने अपने स्वार्थवश वेदों के मंत्रों का गलत अर्थ लगाकर यज्ञों में पशुबलि, मूर्तिपूजा, श्राद्ध तर्पण आदि करना आरम्भ कर दिया तथा अनेकों मत मतान्तर चला दिये जिससे केवल भारत से ही नहीं बल्कि विश्व से वैदिक धर्म प्रायः लुप्त हो गया और अज्ञान, अंधविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला हो गया। फिर ईश्वर की अपार कृपा से सन् १८२५ में देव दयानन्द का जन्म टंकारा (गुजरात) में हुआ। उन्होंने प्रकाण्ड वैदिक विद्वान् स्वामी विरजानन्द जी से वेदों का स्वाध्याय करके, देश में पुनः वेदों का प्रचार किया। जितना वेद प्रचार होना चाहिए था उतना न होने से अभी तक वेद माता की दुर्दशा ही है। वेद प्रचार अधिक होने से यह समस्या हल हो सकती है।

५. गंगा माता

हिन्दू धर्म में गंगा माता को बड़ा पवित्र माना गया है। इसकी यह विशेषता है कि- इसका जल चाहे कितने ही दिन तक रखो परन्तु उसमें कीड़े नहीं पड़ेंगे। यह कोई चमत्कार नहीं इसका कारण केवल यही है कि यह पहाड़ों में जहाँ जड़ी-बूटियाँ अधिक हैं, वहीं से होकर आती हैं जिससे इसके पानी में यह विशेषता हो जाती है। अन्य नदियों में नहीं। हिन्दू धर्म में यह मान्यता बन गई है कि गंगा नदी में स्नान करने से मनुष्य के पाप घट जाते हैं। यह एक गलत धारणा है जिससे हिन्दू जाति में पाप बढ़ गया है। महर्षि दयानन्द के वेद प्रचार से यह भ्रम प्रायः समाप्त हो गया है। परन्तु इस समय इसकी जो दुर्दशा हो रही है, उसका कारण यह भी है कि जहाँ-जहाँ से यह गुजरती है उसके किनारे के शहरों का गन्दा पानी इसमें गिरता रहता है और गंगा के पवित्र जल को

गन्दा बना देता है। कहीं-कहीं तो गंगा का जल इतना गन्दा हो जाता है, उसमें स्नान करने का मन भी नहीं करता। इस प्रकार इस समय गंगा माता की भी दुर्दशा हो रही है।

आर्य समाज के नेतृत्व में नयी पीढ़ी इस ओर ध्यान दे तो आशा है कि देश में आतंकवाद पूरी तरह से समाप्त कर दिया जायेगा। देश से भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, लूट खसोट सब बन्द कर दी जायेगी। गो माता की हत्या बन्द कर दी जायेगी, गंगा में गन्दा पानी गिरना बन्द कर हो जायेगा। देश में वेदों का प्रचार अधिक होना आरम्भ हो जायेगा, जिससे अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड भी समाप्त हो जायेगा और माता-पिता का प्रत्येक घर में सम्मान होना आरम्भ हो जायेगा, जिससे उम्मीद है कि इन पाँचों माताओं का सम्मान होने लगेगा जिससे देश उन्नति करता हुआ साथ ही समृद्धशाली होता हुआ पुनः 'विश्व गुरु' तथा 'सोने की चिड़िया' हो जाये ऐसी आशा है।

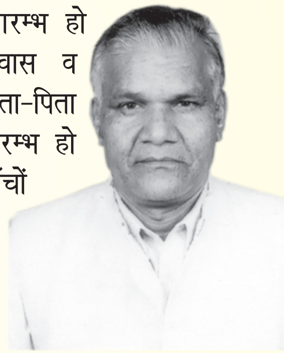

-खुशहाल चन्द आर्य
गोविन्दराम एण्ड सन्स
महात्मा गाँधी रोड, दोतल्ला
पिन- ७०००००७ (कोलकाता)

न्यास द्वारा प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश
रु.100 के स्थान पर अब रु.45 में उपलब्ध
सौ प्रतियाँ लेने पर रु.4000
(डाक खर्च अतिरिक्त)

रु.15000 सत्यार्थ प्रकाश प्रचार
सहयोग राशि देकर एक हजार प्रतियों पर
अपना वा अपने किन्हीं परिचित का
विवरण फोटो सहित छपवावें।

कथा सरित

वास्तविक पुरस्कार

बात पुराने समय की है। एक राजा था। उसे शौक था तो बस सुन्दर-सुन्दर इमारतें बनवाने का। उसके राज्य में चारों ओर विशाल प्रासाद और भव्य भवन दिखलाई पड़ते थे। राजा ने दूर-दूर से कुशल शिल्पियों को अपने राज्य में बुला रखा था ताकि वे राज्य में और सुन्दर-सुन्दर इमारतों व विशाल प्रासादों और भवनों का निर्माण कर सकें। राजा शिल्पियों का आदर भी करता था और उन्हें उचित पारिश्रमिक के अलावा पुरस्कार भी देता था। इन्हीं शिल्पियों में एक अत्यन्त अनुभवी शिल्पी भी था जो अब वृद्ध हो गया था। उसने वर्षों तक राज्य की सेवा करते हुए अनेक उत्कृष्ट भवनों का निर्माण किया था। राजा उसे शिल्पीश्रेष्ठ कह कर पुकारते थे। एक दिन शिल्पीश्रेष्ठ ने राजा से कहा, 'महाराज मैंने जीवन भर राज्य की सेवा की है लेकिन अब में वृद्ध हो गया हूँ इसलिए मुझे राज्य की सेवा से मुक्त करने की कृपा करें।'

राजा ने शिल्पीश्रेष्ठ की बात बड़े ध्यानपूर्वक सुनी और उससे कहा, 'शिल्पीश्रेष्ठ आपकी सेवाओं के लिए मैं ही नहीं पूरा राज्य कृतज्ञ है। आपको सेवानिवृत्त होने का पूरा अधिकार है लेकिन मेरी ख़्वाहिश है कि सेवानिवृत्ति से पहले आप मेरे लिए एक भवन और बनाओ जो आज तक बने सभी भवनों से श्रेष्ठ व उत्कृष्ट हो।' शिल्पी राजा की ख़्वाहिश को कैसे टाल सकता था? वह भवन बनाने के काम में जुट गया लेकिन बेमन से। उसने उस श्रेष्ठता व उत्कृष्टता का परिचय नहीं दिया जिसकी उससे अपेक्षा थी। बस किसी तरह भवन पूरा कर दिया और एक दिन फिर राजा के सामने जा खड़ा हुआ और राजा से प्रार्थना की, 'महाराज मैंने आपकी ख़्वाहिश के अनुसार नया भवन भी तैयार कर दिया है इसलिए अब तो मुझे राज्य की सेवा से शीघ्र मुक्त करने की कृपा करें।'

हाँ आज से आप राज्य की सेवा से मुक्त हुए। मैं आपकी कला से अत्यन्त प्रभावित हूँ और आपको विशेष रूप से पुरस्कृत करना चाहता हूँ और इसीलिए मैंने आपसे इस उत्कृष्ट भवन का निर्माण करवाया है ताकि आपको पुरस्कार स्वरूप ये भवन दे सकूँ। शिल्पी प्रसन्न तो हुआ लेकिन उसे इस बात का बेहद अफसोस भी हुआ कि उसने इस भवन का निर्माण पूरे मन से नहीं किया और उसमें अनेक कमियाँ रह गईं।

हमारी सेवानिवृत्ति के बाद की अवस्था भी प्रायः कुछ ऐसी ही होती है जहाँ हम अपनी श्रेष्ठता को नज़रअंदाज़ कर अनमने से होकर कार्य करते लगते हैं जबकि इस दौरान किया जाने वाला कार्य ही हमारा वास्तविक पुरस्कार होता है। अकर्मण्यता अथवा अनुत्साह के कारण हम स्वयं अपना पुरस्कार खो देते हैं।

- सीताराम गुप्ता
ए.डी.-१०६-सी, पीतमपुरा, दिल्ली

स्वास्थ्य

आमतौर पर मानसून को प्राकृतिक सुन्दरता के रूप में देखा जाता है। हालांकि, बारिश का यह मौसम कई लोगों के लिए हानिकारक भी होता है। क्योंकि यही वह मौसम होता है, जब हममें से ज्यादातर लोग बीमार पड़ते हैं। इतना ही नहीं, बारिश के मौसम में वायरल फीवर, खांसी-जुकाम से पीड़ित होना काफी आम है। अपने स्वास्थ्य के प्रति उदासीन रहना इन बीमारियों के होने का सबसे बड़ा कारण है। ऐसे में जरूरी है कि आप मानसून में अपने स्वास्थ्य का अधिक ध्यान रखें।

हमने मानसून के मौसम में स्वास्थ्य को बेहतर रखने के लिए एक सूची बनाई है।

१. व्यक्तिगत स्वच्छता बनाए रखें

बारिश के मौसम में जो सबसे महत्वपूर्ण बात है, वह है व्यक्तिगत स्वच्छता। आपको अपनी साफ-सफाई पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। आपको प्रतिदिन अच्छी तरह से स्नान करना चाहिए। कई वायरस और बैक्टीरिया हमारे आस-पास मौजूद होते हैं, जो हमें दिखाई नहीं देते हैं ये काफी सूक्ष्म होते हैं। इसलिए अपने आप को बाहर से साफ और स्वच्छ बनाए रखना एक जरूरी कदम है।

२. अपनी प्रतिरक्षा को मजबूत करें

यदि आपकी प्रतिरक्षा प्रणाली (इम्यून सिस्टम) कमजोर होगी तो आप बार-बार बीमार पड़ सकते हैं। आपकी रक्षा प्रणाली को मजबूत करने का सबसे अच्छा तरीका विटामिन सी का सेवन है। अपने आहार में लहसुन, सब्जियाँ, फल और अनाज शामिल करें। ग्रीन टी पीने से भी आपकी इम्युनिटी को मजबूत बनाने में मदद मिल सकती है।

३. साफ और सूखे कपड़े और जूते पहनें

यदि आपके कपड़े और जूते ठीक से नहीं सूखे हैं, तो उन्हें न पहनें। नम कपड़े और जूते अकसर रोगाणुओं के लिए घर बन जाते हैं। साफ और पूरी तरह से सूखे कपड़े और जूते पहनना सुनिश्चित करें।

४. घर को साफ रखें

अकसर बारिश के दिनों में जल जमाव होता है। स्थिर पानी मच्छरों के लिए एक प्रजनन भूमि बन सकता है। इसलिए, अपने घर और आस-पास को साफ और सूखा रखना बारिश के दिनों का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाता है।

५. उबला हुआ पानी पीएँ

अगर सड़क के किनारे की जूस की दुकान आकर्षक लगती है, आपको मानसून के दौरान अपने आप पर नियंत्रण करना चाहिए। आपको ये कभी नहीं पता होता कि जूस तैयार करने में इस्तेमाल होने वाला पानी संक्रमित है या नहीं। सुनिश्चित करें कि आप केवल उबला हुआ पानी पीएँ। दूषित पानी आपको जल जनित रोगों के खतरे में डाल सकता है।

६. सब्जियों को अच्छे से पकाकर खाएँ

मानसून के दौरान कच्ची सब्जियाँ आपके घर तक कीटाणु ले जा सकती हैं। उन्हें अच्छी तरह से धोना और उन्हें उबालना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस तरह, आप खतरनाक जल जनित (दूषित जल से होने वाले रोग) रोगों से बच सकते हैं।

७. पर्याप्त नींद लें

कम घंटों की नींद न केवल आपको थकान महसूस कराएगी बल्कि आपको कमजोर भी बनाएगी। कमजोर शरीर फ्लू को अपनी ओर आकर्षित करने की अधिक संभावना रखते हैं। सुनिश्चित करें कि आप रात को भरपूर नींद लें ताकि आप शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से तरोताजा और सक्रिय महसूस करें।

८. बारिश में भीगने पर स्नान करें

यदि आप बारिश में भीग जाते हैं, तो स्नान करें और अपने बालों को तुरन्त सुखा लें। भीगे बाल और कपड़े फ्लू पैदा करने वाले वायरस को आकर्षित कर सकते हैं। यदि आपको फ्लू हुआ है, तो गर्म पानी का सेवन करें, यह आपके गले में होने वाली खराश या अन्य समस्याओं को ठीक करेगा।

९. एक्सरसाइज

हर दिन व्यायाम करने से आप हमेशा फिट रह सकते हैं। अगर बारिश के मौसम में घर के बाहर नहीं निकल पा रहे हैं तो घर में ही वर्कआउट कर सकते हैं। आप सरल इनडोर एक्सरसाइज जैसे- स्क्वैट्स, पुश-अप और योगासन व प्राणायाम करना जारी रख सकते हैं।

१०. अपने हाथों को धोएँ

जब आप कहीं से घर वापस आते हैं तो सबसे पहले आपको साबुन से अपने हाथों को २० सेकेंड तक अच्छी तरह से धोना चाहिए। इस तरह से कोई भी रोगाणु आपके शरीर में प्रवेश नहीं करेगा और न ही नुकसान पहुँचाएगा। सुनिश्चित करें कि आप अपने हाथ धोने से पहले अपनी आँख, नाक या कान न छुएँ। शौच के बाद और भोजन से पहले हाथों को जरूर धोएँ।

साभार- (only my health)

स्वामी तत्त्वबोध जी सरस्वती की 16वीं पुण्यतिथि

महर्षि दयानन्द जी की कर्मस्थली, सत्यार्थप्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ की रचनास्थली, नवलखा महल, उदयपुर, राजस्थान, भारत को राजस्थान राज्य सरकार से प्राप्त करने के पश्चात्, श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर के संस्थापक अध्यक्ष के रूप में, सर्वमेध यज्ञ का सम्पादन कर, अहर्निश आजीवन तन मन धन सब कुछ न्योछावर कर, इस जीर्णशीर्ण भवन को एक भव्य व प्रेरक स्मारक के रूप में परिवर्तित कर विश्व मानवता को एक अमूल्य भेंट देने वाले पूज्य स्वामी तत्त्वबोध जी सरस्वती की 16वीं पुण्यतिथि पर उन्हें स्मरण करते हुए, न्यास के सभी सदस्यगण, विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। इस अवसर पर उनके दिखाए मार्ग पर चलते हुए उनके छोड़े कार्यों को पूर्ण करने हेतु हम सभी संकल्पित होते हैं।

– भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास

शोक संवेदना

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर सत्यार्थ दूत श्रीमती सरोज जी वर्मा को आर्यजनों की श्रद्धांजलि

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, नवलखा महल, उदयपुर में आयोजित श्रद्धांजलि सभा में जयपुर, अजमेर, आबूरोड, उदयपुर, चित्तौड़गढ़ आदि स्थानों से पधारे आर्यजनों ने स्मृतिशेष सत्यार्थदूत से अलंकृत श्रीमती सरोज जी वर्मा धर्मपत्नी श्री ओमप्रकाश जी वर्मा, प्रधान आर्य समाज, किशनपोल बाजार, जयपुर को भावभीनी श्रद्धांजलि दी ।

सत्यार्थदूत से सम्मानित वैदिक विदुषी, सेवानन्द सरस्वती वैदिक धर्म प्रचार प्रसार न्यास की अध्यक्ष श्रीमती सरोज वर्मा, दो दशकों से भी अधिक समय से न्यास के साथ जुड़ी रहीं। न्यास प्रवक्ता के रूप में उन्होंने अपनी सेवाएँ दीं। उन्होंने विभिन्न वैदिक सिद्धान्तों पर अपना चिन्तन, अपनी सशक्त लेखनी के माध्यम से 17 पुस्तकों में संजोकर और निःशुल्क जन सामान्य तक पहुँचाकर जो अद्भुत कार्य किया है वह आर्य जगत् के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा।

ऐसी तपस्विनी बहिन श्रीमती सरोज वर्मा का दिनांक 26 फरवरी 2020 को जयपुर में निधन हो गया था। उनकी स्मृति में आयोजित श्रद्धांजलि सभा में श्रीमान् इन्द्रदेव जी पीयूष और श्री भवानीदास जी आर्य ने भजन प्रस्तुत किए। श्रीमती सरोज जी की सुपुत्री डॉ. हेमलता जी ने उनका जीवन परिचय दिया। तत्पश्चात् श्री विनोद राठौड़, श्री मोतीलाल जी आर्य, श्री जे.पी. अग्रवाल, डॉ. अरविन्द राजपुरोहित, श्री रासासिंह जी रावत, श्री अशोक जी आर्य, श्री सुधाकर पीयूष, श्री एम.एल. गोयल तथा डॉ.अमृतलाल तापड़िया आदि ने उनके साथ जुड़ी स्मृतियों को प्रस्तुत करते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की।

प्रारम्भ में शांतियज्ञ न्यास पुरोहित श्री नवनीत आर्य के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। अन्त में न्यास प्रांगण में उनकी स्मृति में उनके परिजनों ने वृक्षारोपण भी किया। इस अवसर पर स्मृति शेष श्रीमती सरोज जी द्वारा लिखित 'श्राद्ध एवं तर्पण का वैदिक स्वरूप' नामक पुस्तक उपस्थित सभी आर्यजनों को उनकी स्मृति में वितरित की गई। इस अवसर पर उदयपुर के हिरणमगरी, समोरबाग एवं सज्जननगर के आर्यसमाज के पदाधिकारी एवं आर्यजन भी उपस्थित थे।

– डॉ. अमृतलाल तापड़िया, संयुक्त मंत्री-न्यास

आर्यसमाज के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान्, अनेक पुस्तकों के लेखक, उधमपुर, जम्मू कश्मीर और सुन्दरनगर (मण्डी) हिमाचल प्रदेश स्थित अनेक वैदिक आश्रमों के संचालक व संस्थापक, महात्मा चैतन्यमुनि जी (हिमाचल प्रदेश) का निधन अचानक दिल का दौरा पड़ने से 26 जून, 2020 शुक्रवार की दोपहर को हो गया।

न्यास के साथ आपका पुराना सम्बन्ध रहा। आपके लेख सत्यार्थ सौरभ में यदा कदा छपते रहते थे। इस दुःख के अवसर पर श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के सभी न्यासियों की ओर से शोक संवेदना प्रस्तुत करते हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करें तथा शोक संतप्त आर्यजनों को इस दुःख को सहने की शक्ति प्रदान करें।

न्यास के न्यासी तथा दिल्ली आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान माननीय भाई धर्मपाल जी आर्य की ज्येष्ठ बहिन श्रीमती सुमित्रा देवी जी के आकस्मिक निधन के समाचार से हम सब दुःख की अनुभूति करते हैं। इस दुःख के अवसर पर श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के सभी न्यासियों की ओर से शोक संवेदना प्रस्तुत करते हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करें तथा शोक संतप्त परिवार को इस दुख को सहने की शक्तिप्रदान करें।

- अशोक आर्य

अति दुःखद समाचार है कि वरिष्ठ आर्य विद्वान्, आत्म शुद्धि आश्रम, बहादुरगढ़ के मुख्य अधिष्ठाता स्वामी धर्ममुनि जी अब हमारे मध्य नहीं रहे। उनकी कमी क्षेत्र और सम्पूर्ण आर्य समाज में हमेशा खलती रहेगी। न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार अपनी ओर से हार्दिक श्रद्धांजली सम्प्रेषित करता है तथा परमपिता परमेश्वर से यही प्रार्थना है कि वे दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करे।

समाचार

तीन दिवसीय वेद पारायण यज्ञ सम्पन्न

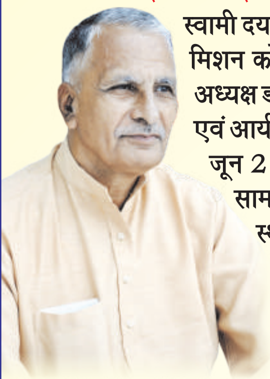

स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रेरणा से ऋषि दयानन्द के मिशन को मूर्त रूप देने वाले वैदिक मिशन मुम्बई के अध्यक्ष डॉ. सोमदेव शास्त्री द्वारा, आर्य समाज नेनोरा एवं आर्य युवक परिषद् के तत्वावधान में 28 से 30 जून 2020 तक आयोजित तीन दिवसीय 32वाँ सामवेद पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ।

स्थानीय आर्य समाज सत्संग भवन में आयोजित उक्त कार्यक्रम में वर्तमान वैश्विक महामारी कोरोना संकट की परिस्थितियों को देखते हुए सोशल डिस्टेन्स का पालन करते हुए सूक्ष्म रूप से आयोजित उक्त यज्ञ प्रतिदिन 7 से 10 बजे तथा सायं 4 से 6 बजे तक यज्ञ ब्रह्मा आचार्य जीववर्द्धन जी शास्त्री तथा आचार्य दयासागर जी के आचार्यत्व में आयोजित किया गया। यज्ञ पूर्णाहुति के अवसर पर मंचासीन आचार्यों द्वारा डॉ. शास्त्री की भार्या श्रीमती सुदक्षिणा शास्त्री के जन्म दिन की शुभकामनाएँ देते हुए दीर्घायु रहने हेतु आशीर्वाद प्रदान किया गया। यज्ञ ब्रह्मा आचार्य जीववर्द्धन जी शास्त्री तथा आचार्य दयासागर जी का कार्यक्रम के आयोजक डॉ. शास्त्री द्वारा स्वागत अभिनन्दन तथा दक्षिणा समर्पित कर विदाई समारोह आयोजित किया गया। साथ ही उक्त कार्यक्रम में पुरोहित शिवनारायण नागर द्वारा समर्पित योगदान पर श्री नागर का भी अभिनन्दन किया गया। कार्यक्रम का संचालन आर्य समाज के कोषाध्यक्ष कुंजीलाल पाटीदार ने तथा आभार आर्य युवक परिषद् अध्यक्ष दशरथ पाटीदार ने किया।

प्रत्येक भारतीय को एकाकार होकर लड़ना होगा चीन जैसे घातक शत्रु से युद्ध : विनोद बंसल

योग–यज्ञ कर लिया चीनी बहिष्कार का संकल्प, सत्यार्थ प्रकाश के परीक्षार्थियों को किया पुरस्कृत

नई दिल्ली। 21 जून 2020। चीन जैसे घातक शत्रु से मुकाबला करने हेतु सिर्फ सीमा पर सैनिक ही नहीं अपितु प्रत्येक भारतीय को लड़ना पड़ेगा युद्ध। योग दिवस पर यौगिक क्रियाओं, ऑनलाइन हवन–यज्ञ तथा सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास के परीक्षार्थियों को पुरस्कार वितरण के उपरान्त बोलते हुए विश्व हिन्दू परिषद् के राष्ट्रीय प्रवक्ता श्री विनोद बंसल ने कहा कि भारतीयों को चीन का पूर्ण बहिष्कार कर अन्दर तक घुसपैठ जमाए शत्रुओं को मारना होगा जिससे उसकी अर्थव्यवस्था के रीड की हड्डी को तोड़ा जा सके। ये विस्तारवादी मानसिकता का शातिर साम्यवादी तभी होश में आएगा। अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर इस रविवासरीय हवन–सत्संग स्वाध्याय व सम्मान कार्यक्रम का गूगल मीट के माध्यम से आयोजन किया गया। प्रातः 9 बजे दर्शनाचार्या श्रीमती विमलेश बंसल आर्या (दिल्ली) के कुशल ब्रह्मत्व में यज्ञ हुआ व प्रेरक योग गीत के साथ में योग पर ही सुन्दर प्रवचन किया तथा कच्छ गुजरात के श्रद्धेय संत स्वामी शान्तानन्द सरस्वती जी के द्वारा सत्यार्थप्रकाश के स्वाध्याय, सभी दुखों से छूटने के लिए अष्टांग योग की अनिवार्यता एवं यज्ञ के अनुष्ठान की महत्ता बताई गयी। श्री विनोद बंसल जी द्वारा देश के अमर वीर बलिदानियों को श्रद्धांजलि देते हुए सत्यार्थप्रकाश के परीक्षार्थियों को प्रतीकात्मक रूप में प्रमाण–पत्र वितरण किए। स्वामी शान्तानन्द सरस्वती एवं आचार्या विमलेश बंसल जी के द्वारा लॉक डाउन के दौरान सत्यार्थप्रकाश नवम समुल्लास का व्हाट्सऐप के माध्यम से ऑन लाइन अध्यापन कराया गया था जिसमें अनेक प्रान्तों के महिला, पुरुष, बच्चों व बुजुर्गों ने पूरे मनोयोग से भाग लिया तथा अंत में लिखित परीक्षा भी दी थी। परीक्षा में नई दिल्ली की श्रीमती आशा भटनागर ने सर्वाधिक अंक प्राप्त किए। तत्पश्चात् आर्य जगत् की भजनोपदेशिका श्रीमती सुदेश आर्या के शान्ति भजन ने सभी को मंत्र मुग्ध कर दिया। कार्यक्रम का संचालन श्रीनगर (जम्मू कश्मीर) से आचार्य श्री अनुज आर्य ने किया।

– विनोद बंसल, राष्ट्रीय प्रवक्ता, विहिप

आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर के मंत्री श्री भूपेन्द्र जी शर्मा के सुपुत्र चि.शिवा का पाणिग्रहण संस्कार आयुष्मती तनु जैन के साथ कोरोना काल की विशेष परिस्थियों के कारण सीमित अतिथियों की उपस्थिति में आचार्य सत्यप्रिय शास्त्री के पौरोहित्य में 29 जून 2020 को सम्पन्न हुआ। न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार के सभी सदस्यों की ओर से श्री भूपेन्द्र जी एवं उनके समस्त परिवार को अनेकानेक बधाइयाँ एवं नव दम्पति को शुभाशीष।

– नारायण मित्तल, कोषाध्यक्ष–न्यास

महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त श्रद्धेय डॉ. सुखदेव चन्द सोनी जी की 86वीं वर्षगाँठ

महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त, सुदूर विदेश में सहस्रों परिवारों को सम्बल प्रदान करने वाले, निज के प्रयासों व धन से शिकागो आर्यसमाज की संस्थापना व संचालन करने वाले, आर्यप्रतिनिधि सभा अमेरिका के पूर्व प्रधान, इस न्यास के संरक्षक, श्रद्धेय डॉ. सुखदेव चन्द सोनी जी की 86वीं वर्षगाँठ पर न्यास के सभी सदस्यों की ओर से मुदित मन से हार्दिक शुभकामनाएँ अर्पित करते हुए हम हर्ष विभोर हैं। हमें आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास है कि आपका वरद हस्त सदैव की भाँति न्यास को प्राप्त होता रहेगा। परमपिता परमात्मा से आपके निरामय दीर्घायुष्य की प्रार्थना करते हैं।

– अशोक आर्य, कार्यकारी अध्यक्ष, नवलखा महल, उदयपुर

सत्यार्थ-पीयूष

ईश्वर न्यायकारी और दयालु है

ईश्वर सबका कल्याण चाहने वाला, मात्र न्याय करता है यही उसकी दया है। विचार करने पर यह ध्यान हो जावेगा कि दिया गया दण्ड दुष्कर्मी पर भी दया है क्योंकि दण्ड पाकर वह अपने दुष्कर्म का फल पा जहाँ उससे मुक्त हो जाता है वहीं यह जान कि अगर वह गलत कार्य करेगा तो उसका दण्ड उसे अवश्य मिलेगा, भविष्य में बुरे कार्यों से दूर रहता है। इसीलिए महर्षिवर सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं कि 'न्याय और दया का नाममात्र ही भेद है, क्योंकि जो न्याय से प्रयोजन सिद्ध होता है, वही दया से। दण्ड देने का प्रयोजन है कि मनुष्य अपराध करने से बन्द होकर दु:खों को प्राप्त न हों। वही दया कहाती है जो पराये दु:खों का छुड़ाना। जैसा अर्थ दया और न्याय का तुमने किया ('दया उसको कहते हैं जो अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड़ देना के सन्दर्भ में) वह ठीक नहीं क्योंकि जिसने जैसा, जितना बुरा कर्म किया हो, उसको उतना, वैसा ही दण्ड देना चाहिए, उसी का नाम न्याय है।

पाप क्षमा करने की हानि-

य: शश्वतो मह्येनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वा जघान।
य: शर्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्र:।।

- ऋ.२/१२/१०

यदि परमेश्वर दुष्ट आचरण वालों को ताड़ना न दे, धार्मिकों का सत्कार न करे और डाकुओं को नष्ट न करे तो न्याय व्यवस्था नष्ट हो जाय।

और जो अपराधी को दण्ड न दिया जाय तो दया का नाश हो जाय, क्योंकि एक अपराधी डाकू को छोड़ देने से सहस्रों धर्मात्मा पुरुषों को दु:ख देना है। जब एक के छोड़ने में सहस्रों मनुष्यों को दु:ख प्राप्त होता है, तब वह दया किस प्रकार हो सकती है? दया वही है कि उस डाकू को मार देने से अन्य सहस्रों मनुष्यों पर दया प्रकाशित होती है।'

ईश्वर के न्यायकारी स्वरूप को ठीक से न समझने के कारण धार्मिक जगत् में 'विशेष अनुग्रह' का अपसिद्धान्त विकसित कर लिया गया है। अर्थात् न्यायकारी होते हुए भी ईश्वर अपने भक्तों पर 'विशेष अनुग्रह' कर देता है। इसी सर्वथा अवैदिक, अनार्ष, असत्य अवधारणा के चलते तथाकथित धर्माचार्यों ने ईश्वर का विशेष अनुग्रह प्राप्त करने के नाना सस्ते उपाय सृजित कर लिये। ये सभी अपनी अपनी दुकान लेकर बैठ गये और इनमें अधिकाधिक ग्राहक जुटाने के उद्देश्य से सस्ते से सस्ते रास्ते बताये गये। दुर्भाग्य से कुछ हजार वर्षों से ऐसे लोगों की दुकान खूब चली और आज भी चल रही है कारण कि मनुष्य भी सत्य से दूर इनके विज्ञापनों की मृग मरीचिका में भटक इन्द्रियानुशासन के कठिन मार्ग को छोड़ हर प्रकार के कर्म कर अशुभ कर्मों के फल से मुक्ति के इन प्रलोभनों में फंसा है।

अतएव दोनों ओर के स्वार्थ के चलते यह धन्धा आज भी फलीभूत हो रहा है। हमें स्मरण रखना होगा कि प्रभु के लिए सभी प्राणी बराबर हैं। वह सभी की भलाई चाहता है पर किसी से अपने लिये कुछ भी नहीं चाहता। वह पूर्णकाम है उसे किसी भी चीज की आकांक्षा है ही नहीं। जहाँ तक भक्ति का प्रश्न है यह भी समझ लेना चाहिए कि भक्ति से परमेश्वर की प्रसन्नता का सम्बन्ध नहीं है। भक्त का अपना लाभ है, उसकी अपनी उन्नति है, वह भी तब जब वह भक्ति के मिथ्या आडम्बरों को त्याग शुद्ध वैदिक स्वरूप को ग्रहण कर लेता है।

पाप फल क्षमा अथवा विशेष अनुग्रह की मिथ्या अवधारणा से व्यक्तिगत उन्नति का मार्ग सदैव के लिए बन्द हो जाता है। इसे एक उदाहरण से समझें। एक कक्षा में कई विद्यार्थी पढ़ते हैं। सभी को परीक्षा में उत्तीर्ण होने की चिन्ता होती है अतएव परिश्रम से पढ़ते हैं। परीक्षा के अवसर पर अध्यापक का यही कर्त्तव्य है कि तटस्थ रूप से जो जैसा उत्तर देवे वैसे ही अंक उसे प्रदान करे। यही उसका न्याय होगा। अगर किसी भी हेतु से वह विद्यार्थी विशेष पर अनुग्रह कर उसे यथायोग्य से ज्यादा अंक देगा तो विद्यार्थी वर्ग परिश्रम व पढ़ाई की बजाय उस हेतु का अवलम्बन करने में ज्यादा रुचि रखेगा जिससे अध्यापक का अनुग्रह प्राप्त हो जाता है। बताइये, फिर विद्यार्थी पढ़ेंगे क्यों? इस प्रकार उनकी व्यक्तिगत उन्नति का रास्ता समाप्त हो जावेगा साथ ही वे पुरुषार्थहीन, अकर्मण्य हो केवल विशेष अनुग्रह प्राप्त करने की जुगत में लगे रहेंगे। यही सब आज के तथाकथित धार्मिक जगत् में हो रहा है। **क्रमश:** ....

- अशोक आर्य
नवलखा महल, गुलाब बाग

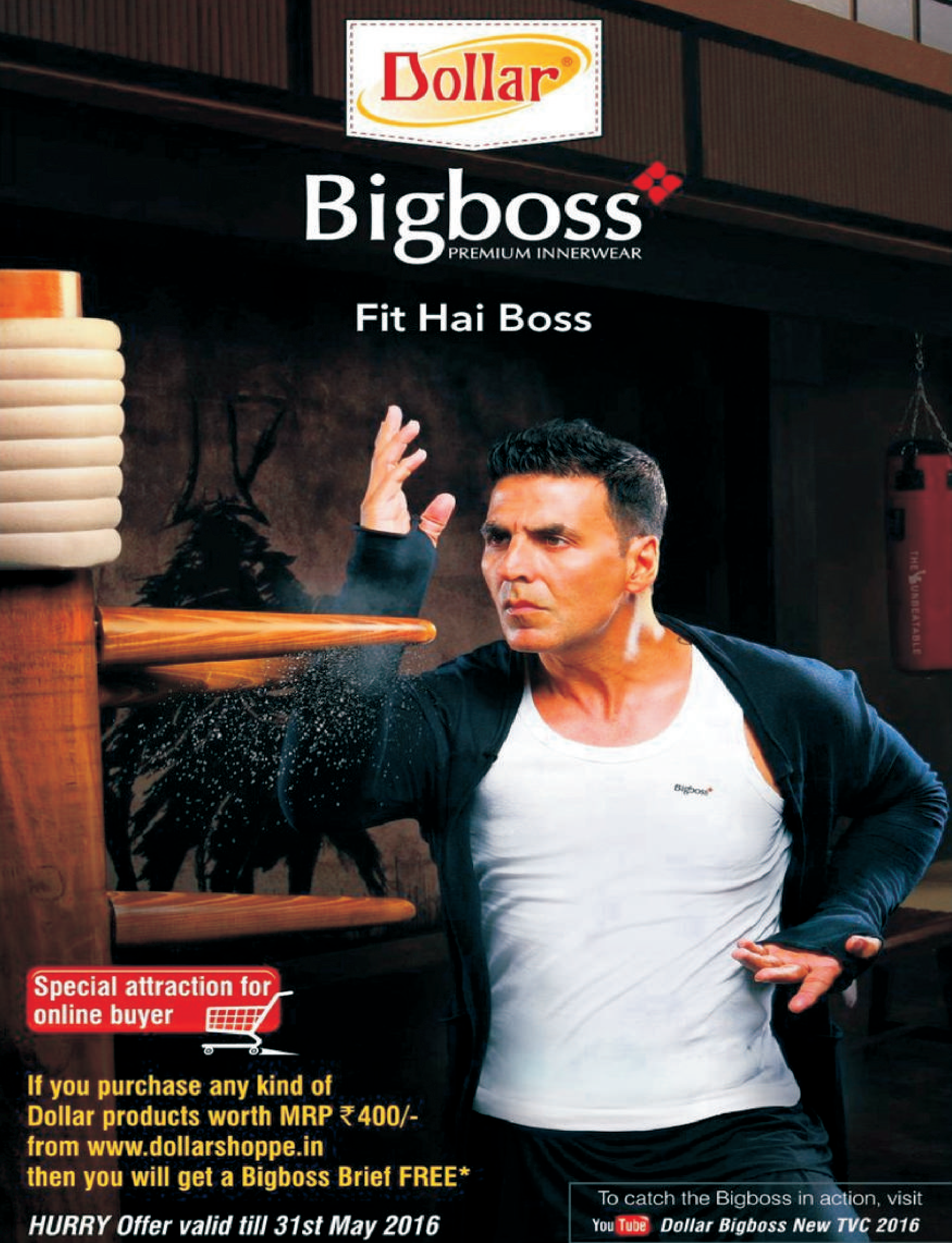
Dollar
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
Special attraction for online buyer
If you purchase any kind of Dollar products worth MRP ₹400/- from www.dollarshoppe.in then you will get a Bigboss Brief FREE*
HURRY Offer valid till 31st May 2016
To catch the Bigboss in action, visit
YouTube Dollar Bigboss New TVC 2016

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 July-2020 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2019-2021

माता-पिता, आचार्य्य अपने सन्तान और शिष्यों को सदा सत्य उपदेश करें और यह भी कहैं कि जो-जो हमारे धर्मयुक्त कर्म हैं, उन-उन का ग्रहण करो और जो-जो दुष्ट कर्म हों, उनका त्याग कर दिया करो।

- सत्यार्थ प्रकाश, द्वितीय समुल्लास पृष्ठ ३५

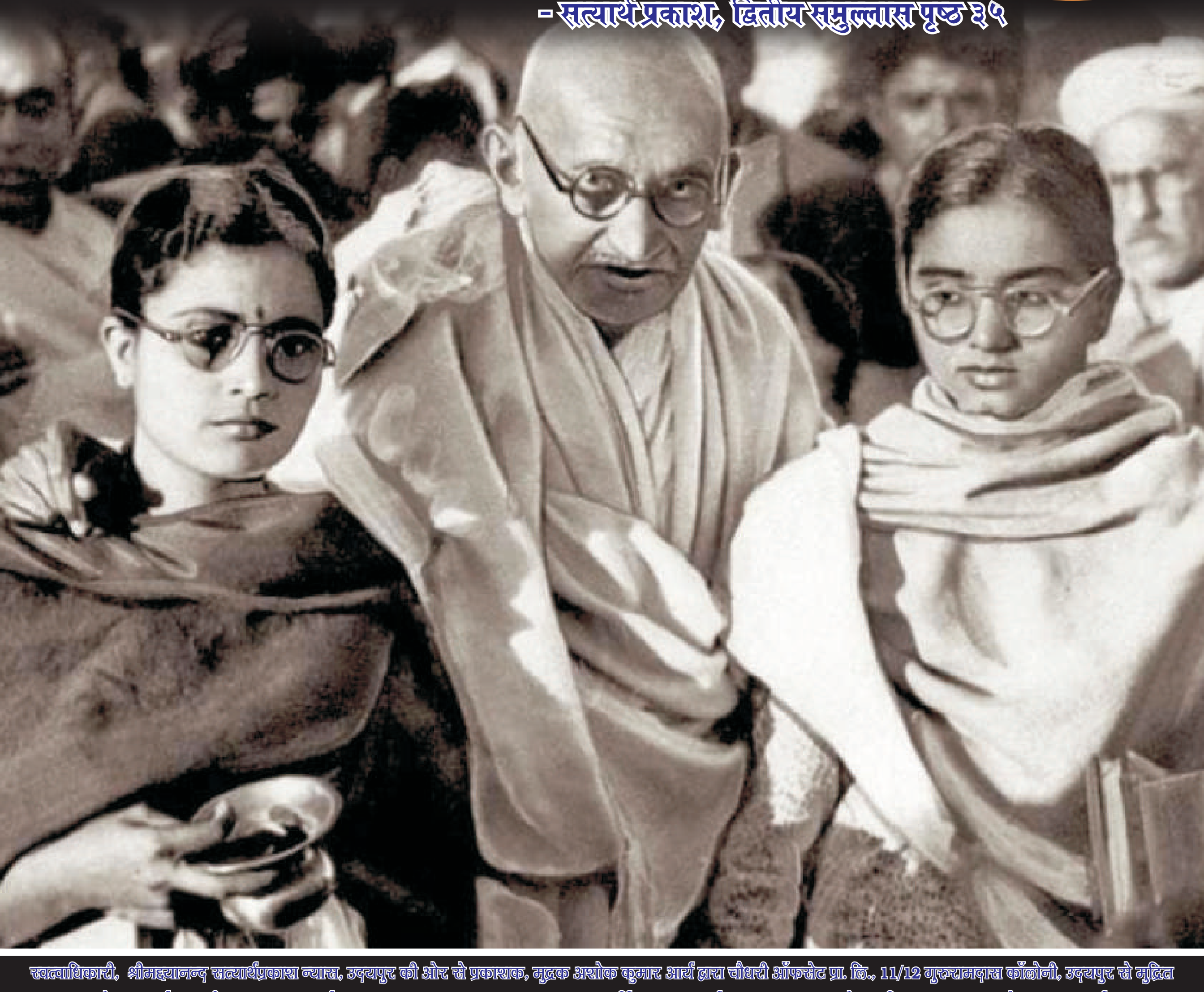

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य
मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर